वर्ष-१६ अंक-१,२ एवं ३ जनवरी,मार्च एवं मई २०२२

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी

मासद्वयी अन्तर्राष्ट्रीय शोध समग्र पत्रिका

A Peer Reviewed and Refereed Journal

ISSN 0973-9777
GISI Impact Factor 3.5628
वर्ष-१६ अंक-१,२ एवं ३
जनवरी, मार्च एवं मई २०२२

एम.पी.ए.एस.वी.ओ.
द्वारा आन्वीक्षिकी सदस्य
सहसंयोजन से प्रकाशित

आन्वीक्षिकी

भारतीय शोध पत्रिका

मासद्वयी अन्तर्राष्ट्रीय शोध समग्र पत्रिका

प्रधान सम्पादिका

डॉ० मनीषा शुक्ला, maneeshashukla76@rediffmail.com

पुनर्निरीक्षक संपादक

प्रो० विभा रानी दुबे, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी, उ०प्र०, भारत

डॉ० नागेन्द्र नारायण मिश्र, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद, उ०प्र०, भारत

प्रो० उमेश चंद्र दुबे, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी, उ०प्र०, भारत

सम्पादक

डॉ० महेन्द्र शुक्ल, डॉ० अंशुमाला मिश्रा

सम्पादक मण्डल

डॉ० मंजू वर्मा, डॉ० अमित जोशी, डॉ० अर्चना तिवारी, डॉ० सीमा रानी, डॉ० सुमन दुबे, डॉ० सच्चिदानंद द्विवेदी, डॉ० मनोज कुमार अग्निहोत्री, पाला सिंह, डॉ० पौलमी चटर्जी, डॉ० राम अग्रवाल, डॉ० शीला यादव, डॉ० प्रतीक श्रीवास्तव, जय प्रकाश मल्ल, डॉ० त्रिलोकीनाथ मिश्र, प्रो० अंजली श्रीवास्तव, विजय कुमार प्रभात, डॉ० जे०पी० तिवारी, डॉ० योगेश मिश्रा, डॉ० पूनम सिंह, डॉ० रीता मौर्या, डॉ० सौरभ गुप्ता, डॉ० श्रुति विग, दीप्ति सजवान, डॉ० निशा यादव, डॉ० रमा पद्मजा वेदुला, डॉ० कल्पना बाजपेयी, डॉ० ममता अग्रवाल, डॉ० दीप्ति सिंह, डॉ० आभा सिंह, डॉ० अरुण कान्त गौतम, डॉ० राम कुमार

अन्तर्राष्ट्रीय सलाहकार मण्डल

पी० विराची (श्रीलंका), फ्रा च्युतिदेश सैन्सोम्बट (बैंकाक, थाईलैंड), डॉ० सीताराम बहादुर थापा (नेपाल), माजिद करीमजादेह (ईराक), मोहम्मद जारेई (जाहेडान, ईरान), मोहम्मद मोजटाबा केयाहफरजानेह (जाहेडान, ईरान), डॉ० होसैन जेनाबदी (सिस्तान एवं बलूचिस्तान, ईरान), मोहम्मद जावेद केयाह फरजानेह (जाबोल, ईरान)

प्रबन्धक

महेश्वर शुक्ल, maheshwar.shukla@rediffmail.com

पाठकों से

आन्वीक्षिकी, भारतीय शोध पत्रिका प्रत्येक दो माह (जनवरी, मार्च, मई, जुलाई, सितम्बर एवं नवम्बर) पर एम०पी०ए०एस०थी०ओ० मुद्रण वाराणसी उ०प्र०, भारत द्वारा प्रकाशित की जाती है। एक वर्ष में आन्वीक्षिकी, भारतीय शोध पत्रिका 6 भाग हिन्दी एवं 6 भाग अंग्रेजी एवं 3 अतिरिक्तांकों के भाग में प्रकाशित की जाती है। डॉक खर्च दर के सम्बन्ध मे जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

वार्षिक पाठक मूल्य दर

संस्थागत एवं व्यक्तिगत : भारतीय 5000+1000/- डॉक शुल्क, एक प्रति 1300+100/- डॉक शुल्क, वैदेशिक : 6000+डॉक खर्च, एक प्रति 1000+डॉक शुल्क

विज्ञापन एवं निवेदन

विज्ञापन के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रधान सम्पादिका के पते पर संपर्क करें। आन्वीक्षिकी एक स्ववित्तपोषित पत्रिका है, अतः किसी भी प्रकार का आर्थिक सहयोग सराहनीय होगा। कृपया अपनी सहयोग राशि चेक अथवा ड्राफ्ट के माध्यम से निम्नलिखित पते पर प्रेषित करें।

सभी पत्राचार निम्नलिखित पते पर ही प्रेषित करें -

B32/16A-2/1, गोपालकुंज, नरिया, लंका वाराणसी, उ०प्र०, भारत, पिन कोड- 221005, मो०नं० 09935784387,

टेलीफोन नं० 0542-2310539, E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com,www.anvikshikijournal.com

मिलने का समय : 3-5 दिन (रविवार अवकाश)

पत्रिका संयोजन : महेश्वर शुक्ल,maheshwar.shukla@rediffmail.com

प्रकाशन : एम०पी०ए०एस०थी०ओ० मुद्रण

प्रकाशन तिथि : १५ मई २०२२

मनीषा प्रकाशन

(पंजीयनी संख्या V-34564, पत्रीकरण संख्या 533/ 2007-2008, B32/16A-2/1, गोपालकुंज, नरिया, लंका, वाराणसी उ०प्र०, भारत)

आन्वीक्षिकी

भारतीय शोध पत्रिका

वर्ष-१६ अंक-१,२ एवं ३ जनवरी,मार्च एवं मई २०२२

शोध प्रपत्र

महाभारत तथा गुटनिरपेक्षता की विदेशनीति -डॉ0 माधवी शुक्ला 1-3

बस्तर की भौगोलिक विशेषताएँ एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि : एक ऐतिहासिक पुनरावलोकन - करूणा देवांगन एवं डॉ0 चेतन राम पटेल 4-8

''ऋतु बसंती : एक अध्ययन -डॉ0 आशा वर्मा 9-13

नवजागरण और स्त्री-प्रश्न -डॉ विजयलक्ष्मी 14-16

''मानस रोगों का विनाश है'' -डॉ0 दिनेश उपाध्याय 17-20

''अस्ति'' प्रणयन गीत के भाव और यथार्थ -डॉ0 अंशुमाला मिश्रा 21-23

अथ द्वितीया : अधिकार सूत्र का सन्निवेश -डॉ0 सपना भारती 24-27

भारत में श्रम-कल्याण -शोभराज 28-32

महामना मालवीय का विराट व्यक्तित्व और मानव धर्म -डॉ0 शबनम खातून 33-36

प्रिंट ISSN 0973-9777, वेबसाइट ISSN 0973-9777

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777
भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,1-3**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 15 मई 2020

महाभारत तथा गुटनिरपेक्षता की विदेशनीति

डॉ० माधवी शुक्ला*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *'महाभारत तथा गुटनिरपेक्षता की विदेशनीति'* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखिका मैं *माधवी शुक्ला* घोषणा करती हूँ कि लेखिका के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेती हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देती हूँ। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इस छपने के लिये भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देती हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देती हूँ।

महाभारत संहिता है, वैविध्यपूर्ण विचारों का विशाल वन है; क्या नहीं है इस महाग्रन्थ में; सच ही कहा गया है *यन्न भारते तन्न भारते* प्रस्तुत निबन्ध गुटनिरपेक्षता की विदेशनीति की दृष्टि से सरसरी तौर पर महाभारत को देखने का एक सामान्य प्रयास है।

कूटनीति या राजनय मानवसभ्यता के साथ ही संकल्पना में आ गया प्रतीत होता है, क्योंकि मनुष्य ने मनुष्य के साथ अपना सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने तथा उसे बनाये रखने के लिए जिस वृत्ति का सहारा लिया, वह कूटनीति ही थी। परिवार में, ग्राम में तथा जिस प्रकार मनुष्य की इकाई विस्तार को प्राप्त होती रही, अन्ततः राष्ट्रों में भी पारस्परिक सम्बन्धों को अपने अनुकूल बनाने के लिए कूटनीति साधन के रूप में प्रभावी रही।

व्यक्तियों के मध्य अनुकूलता प्राप्ति का प्रयास जब राष्ट्रों के मध्य विस्तारित हुआ तो वह राजनय की श्रेणी में आ गया। वस्तुतः समाज कभी भी जड़ नहीं रहा है। यही कारण है कि विभिन्न सभ्यताओं व संस्कृतियों वाले देशों ने भी दूसरे राष्ट्रों से विभिन्न प्रकार से सम्बन्ध रखकर 'राष्ट्रहित' की पूर्ति की है। वस्तुतः किसी भी राष्ट्र का राष्ट्रीय हित उस राष्ट्र की सबसे बड़ी आवश्यकता होती है। राष्ट्रीय हित की प्राप्ति के लिए ही बड़ी-बड़ी कूटनीतिक चालें चली जाती हैं तथा किसी देश की विदेश नीति भी राष्ट्रीय हित के इर्द-गिर्द ही घूमती है। अन्तर्राष्ट्रीय मामले किसी भी दशा में वैयक्तिक मामलों से अधिक भिन्न नहीं होते, क्योंकि वैयक्तिक हितों ने कई बार इतिहास को करवट दी है - द्रोणाचार्य द्वारा अश्वत्थामा के लिए दुग्ध के लिए किये गये प्रयास की कथा तथा उस घटना का भविष्य पर हुआ प्रभाव तो इसका एक उदाहरण मात्र है। इस घटना में मित्र के शत्रु होने की पूरी की पूरी कहानी लिख गई; *गोक्षीरं पिबतो दृष्ट्वा धनिनस्तत्र पुत्रकान्। अश्वत्थामारुदद् बालस्तन्मे सन्देहयद् दिशः।।*

* एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय (चुनार) मीरजापुर (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

अथ पिष्टोदकेनैनं लोभयन्ति कुमारकाः। पीत्वा पिष्टरसं बालः क्षीरं पीतं मयापि च।। हास्यतामुपसम्प्राप्तं कश्मलं तत्र मेऽभवत्। द्रोणं धिगस्त्वधनिनं यो धनं नाधिगच्छति।। प्रतिज्ञां प्रतिज्ञाय यां कर्तास्म्यचिरादिव। द्रुपदे नैवमुक्तोऽहं मन्युनाभिपरिप्लुतः।। अभ्यागच्छं कुरून् भीष्म शिष्यैरर्थी गुणान्वितैः।।

विदेश नीति के अनेक विकल्पों में एक गुटनिरपेक्षता का भी विकल्प है। राष्ट्रीय हित की प्राप्ति के लिये किसी एक पक्ष का सहयोग न लेकर दोनों पक्षों के साथ अपने सम्बन्धों को सक्रियता के साथ निभाना तो गुटनिरपेक्षता की श्रेणी में आ सकता है, किन्तु दोनों पक्षों के विभिन्न मामलों में संवेदनहीन हो जाना, कि 'न्यूट्रल' रहना गुटनिरपेक्षता नहीं हो सकती।

संकल्पना के रूप में गुटनिरपेक्षता भले ही 'राजनीति के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप में आती हो' किन्तु नीति के रूप में गुटनिरपेक्षता कत्तई नहीं है। नेहरू-नासिर-टीटो की तिकड़ी ने द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व को जो गुटनिरपेक्षता का सोच समझाया, वह भारत के लिए कदाचित् या नहीं था। स्वाधीन भारत के पास अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए गुटनिरपेक्षता की विदेशनीति को चुनने के अलावा कोई भी सटीक विकल्प नहीं था, क्योंकि तत्कालीन दशा अमेरिका व सोवियतसंघ में से किसी एक का पक्ष लेने या समर्थन करने से किसी भी प्रकार परिवर्तित नहीं हो सकती थी। यह विकल्प अपने आदर्श रूप में विश्व की अनुपम धरोहर महाभारत में पहले से ही मौजूद था। महाभारत सदियों से विभिन्न राजाओं, शासकों, साम्राज्यों को विभिन्न आदर्शों को दिखाता रहा है। महाभारत वस्तुतः काल व दिक् के ज्ञाता कृष्ण की केन्द्रीय भूमिका का प्रदर्शन है। कृष्ण विवेक का प्रदर्शन करते हैं, सम्पूर्ण महाभारत में महाभारत एक परिवार के मध्य का न्याय-अन्याय का संघर्ष रहा है। कृष्ण कौरव-पाण्डव दोनों के सम्बन्धी हैं। युद्ध के दौरान किसी भी दशा में वे शस्त्र नहीं उठा सकते, किन्तु उनका धर्म है कि वे कौरवों के पास युद्ध- पूर्व की संध्या में गये थे कि उनका उपयोग वे जिस भी प्रकार चाहे कर सकते हैं। कौरवों ने उनकी अक्षौहणी सेना को ही चुना। इसका परिणाम हुआ कि निहत्थे कृष्ण पाण्डवों की ओर हो गये, किन्तु युद्ध के दौरान किसी भी परिस्थिति में उन्होंने शस्त्र नहीं उठाया था पूरी तरह गुटनिरपेक्ष बने रहे।

महाभारत कालीन परिस्थितियाँ अत्यन्त भिन्न थीं। परस्पर रक्त-सम्बन्धियों को एक-दूसरे के विरुद्ध रणक्षेत्र में युद्ध करना था। ऐसे में कोई भी महारथी चाहे वे भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, विदुर हों, सब के लिए कौरवों व पाण्डवों के बीच एक को चुनने की विवशता थी। धृतराष्ट्र के साथ इनकी सहानुभूति भी थी। यही कारण था कि गुटनिरपेक्षता की नई परिभाषा इस युग में परिलक्षित हुई। कुल छाछठ श्लोकों में धृतराष्ट्र ने अपना दर्द संजय से सुनाया है *यदाश्रीषं..तदा नाशंसे विजयाय* अर्थात् हे संजय! जब मैंने सुना...तभी से मुझे विजय की आशा नहीं रह गई।

श्रीकृष्ण द्वारा *'अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो वा'* के माध्यम से द्रोणाचार्य का वध करवाना हो या कि धृतराष्ट्र का यह कहना कि- *यदा द्रोणो विविधानस्त्रमार्गान्/ निदर्शयन् समरे चित्रयोधी। न पाण्डवान् श्रेष्ठतरान् निहन्ति/ तदा नाशंसे विजयाय संजय।।* अर्थात् हे संजय! हमारे आचार्य द्रोण बेजोड़ योद्धा थे और उन्होंने रणाङ्गण में अपने अस्त्र-शस्त्र के अनेक विविध कौशल दिखलाये, परन्तु जब मैंने सुना कि वे वीर शिरोमणि पाण्डवों में से किसी एक का भी वध नहीं कर रहे हैं, तब मैंने विजय की आशा त्याग दी।

..और भीष्म का द्रौपदी को स्वयं अपनी मृत्यु का उपाय सुनाना; *यदाश्रौषं चापगेयेन संख्ये/ स्वयं मृत्युं विहितं धार्मिकेण। तच्चाकार्षुः पाण्डवेयाः प्रहृष्टाः -/ स्तदा नाशंसे विजयाय संजय।।*

जब मैंने सुना कि परम धार्मिक गङ्गा नन्दन भीष्म ने युद्धभूमि में पाण्डवों को अपनी मृत्यु का उपाय स्वयं बता दिया और पाण्डवों ने प्रसन्न होकर उनकी उस आज्ञा का पालन किया। संजय! तभी से मुझे विजय की आशा नहीं रही।

ये गुटनिरपेक्षता की महाभारत कालीन प्रासंगिकता को पुष्ट करने के लिए काफी हैं। महाभारत काल का एक अद्भुत चरित्र विदुर का है। परम राजनीति-कुशल तथा सदैव न्याय के पक्ष धर रहे विदुर ने समय-समय पर पाण्डवों को परामर्श भी दिया।

गुटनिरपेक्ष होना वस्तुतः किसी एक पक्ष को अपनापूर्ण समर्थन देते हुए दूसरे पक्ष के प्रति संवेदनशील होना भी है। महाभारत काल इन दृष्टान्तों से भरा है। महाभारत या रामायण वस्तुतः मनुष्य जाति के लिए आदर्श का कार्य करते हैं। इनके पात्र सार्वकालिक हैं, जो किसी भी देश, काल, वातावरण में पाये जा सकते हैं। यही कारण है कि उस काल की नीतियाँ व निर्णय आज भी उतने ही प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। युद्ध रोकने का सम्पूर्ण प्रयास श्रीकृष्ण ने किया तथा दुर्योधन को

बहुत समझाया, किन्तु *सूच्यग्रं न दास्यामि बिना युद्धेन केशव* का कोई विकल्प बिना युद्ध के था ही नहीं, युद्ध अवश्यम्भावी हो गया।

इसको भी दृष्टि में रखकर धृतराष्ट्र ने संजय से कहा कि- *यदाश्रौषं लोकहितायं कृष्णं/ शमार्थिनमुपयातं कुरूणाम्। शमं कुर्वाणमेंतार्थं च यातं/ तदा नाशंसे विजयाय संजय।।*

इन उदाहरणों तथा तथ्यों के आधार पर संदेह रहित रूप से यह कहा जा सकता है कि गुटनिरपेक्षता, निर्दलीयता या नॉन एलाइन्मेण्ट, तटस्थता या तटस्थतावाद का जन्म हो सकता है। 1945 ई0 के आस-पास हुआ हो या जॉर्जलिस्का इसका प्रथम प्रयोक्ता हों, ये सारे तथ्य तथा इसका स्वरूप पश्चिम के लिए नवीन हो सकता है। किन्तु विश्वगुरु भारत के लिए नहीं, जिसे प्राचीनतम संस्कृति के होने का गौरव प्राप्त है। यह ऋषियों की तपस्थली है। बस एक सकारात्मक सोच की जरूरत है। कदाचित् कोई सन्देह नहीं कि- *यन्न भारते तन्न ब्रह्माण्डे।*

सन्दर्भ

महाभारत, आदि पर्व, पृष्ठ संख्या 395; श्लोक -51, 54, 56, पृष्ठ संख्या 396; श्लोक -74, 75। श्रीमन्महर्षि वेदव्यास प्रणीत -महाभारत, प्रकाशक-गीताप्रेस, गोरखपुर

महाभारत, आदिपर्व, पृष्ठ संख्या 16; श्लोक 188, वहीं

महाभारत, आदिपर्व, पृष्ठ संख्या 16; श्लोक 183, वहीं

महाभारत, आदिपर्व, पृष्ठ संख्या 16; श्लोक 175, वही

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777

भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,4-8**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 26 दिसम्बर 2021

बस्तर की भौगोलिक विशेषताएँ एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि : एक ऐतिहासिक पुनरावलोकन

करूणा देवांगन* एवं डॉ० चेतन राम पटेल**

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *बस्तर की भौगोलिक विशेषताएँ एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि : एक ऐतिहासिक पुनरावलोकन* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखक *करूणा देवांगन एवं चेतन राम पटेल* घोषणा करते हैं कि लेखक के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेते हैं, क्योंकि हमने इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देते हैं। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं हमने इसे छपने के लिये भेजा है। यह हमारी मौलिक कृति है। हम शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देते हैं। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देते हैं।

शोध सारांश

घने वनों से आच्छादित अपने नैसर्गिक सुन्दरता के विख्यात बस्तर चारों सीमा संस्कृतियों से घिरा है, एक ओर आंध्रप्रदेश एक ओर ओड़िसा एक तरफ महाराष्ट्र एवं एक तरफ मध्यप्रदेश से घिरे बस्तर क्षत्रे में इन चारों प्रदेशों की सांस्कृतिक सुन्दरता इस वनांचल को एक अलग ही पहचान देती है। प्राचीन मध्यप्रदेश से अलग हुए बस्तर क्षेत्र में एक ओर केशकाल का पठार है, तो एक ओर बैलाडिला का सम्पन्न पर्वत है। शंखिनी-डंकिनी, बेरूदी मंदिर और चिंतावायु नदियां यहां की प्रमुख नदियां है। प्राचीन बस्तर क्षेत्र वास्तव में दण्डकारण्य क्षेत्र ही था। यहां समय-समय पर अनेक राजवंशों का शासन रहा है, नल- युग से यहां के राजवंशों का आरंभ होते हुये आगे गंग-युग, नाग-युग, क्रमशः काकतीय युग आदि वंशों का आधिपत्य रहा है। वास्तव में बस्तर एक छोटा सा गांव है जिसके नाम से इस पूरे क्षेत्र को बस्तर जिले के नाम से ही जाना जाता है। बस्तर के भौगोलिक विशेषताओं एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि का एक ऐतिहासिक पुनरावलोकन इस शोध पत्र के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

बीज शब्द; भौगोलिक विशेषताएं, जलवायु, नदियां, राजनीतिक पृष्ठभूमि, पर्वत।

बस्तर का भौगोलिक स्वरूप

बस्तर क्षेत्र छत्तीसगढ़ प्रदेश का एक भू भाग है। बस्तर अपनी प्राकृतिक व नैसर्गिक सुन्दरता, जीवनशैली, सामाजिक रीति-रिवाज, वन्य जीवन अपनी परम्पराओं व संस्कृति के लिये पूरे विश्व में सुप्रसिद्ध है। बस्तर की भौगोलिक संरचना वन संपदा, प्रचुर खनिज सम्पदा प्राकृतिक सौन्दर्यता, समृद्ध इतिहास, प्राचीन जनजातिय सभ्यता व संस्कृति बस्तर क्षेत्र में समाया हुआ है। 99114 वर्ग कि0मी0 क्षेत्र का यह संभाग 17.45 डिग्री उत्तरी अक्षांश से 20 डिग्री 24 अंश अक्षांश के मध्य स्थित

* शोध छात्रा, इतिहास विभाग, शहीद महेन्द्र कर्मा विश्वविद्यालय (बस्तर) जगदलपुर (छत्तीसगढ़) भारत
** प्राध्यापक इतिहास विभाग, शासकीय इन्दरू केंवट कन्या महाविद्यालय कांकेर (जिला उत्तर बस्तर) जगदलपुर (छत्तीसगढ़) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

है तथा 30 डिग्री 13 से पूर्वी देशांतर से 82 डिग्री 15 पूर्वी देशांतर में यह अण्डाकार स्वरूप में फैला हुआ है।

प्राचीन काल में बस्तर के राजवंशीय इतिहास का आरंभ नल वंश शासकों से आरंभ होता है कालांतर में गंगवंशीय, छिंदक नागवंश, सोमवंश एवं प्रमुख रूप से वारंगल के चालुक्यों ने सन् 1324 ई0 बस्तर पर अपना आधिपत्य स्थापित किया जो काकतीय राजवंश के नाम से बस्तर पर शासन किया। प्रागैतिहासिक काल से लेकर अब तक बस्तर के नाम व स्वरूप में समय के साथ बदलाव नजर आता रहा है ऐतिहासिक परिवर्तन के साथ-साथ बस्तर की भौगोलिक सीमा में परिवर्तन आना भी स्वाभाविक था।

भौगोलिक संरचना

पृथ्वी की संरचना के आधार पर बस्तर को भौगोलिक दृष्टि से पांच भागो में विभाजित किया गया है। (1) विन्ध्ययन शैल समूह (2) कड़प्पा (3) प्राचीन टेपू (4) ग्रेनाइट एवं नीश (5) इसमें शैनन्ड स्टोन, लाइम स्टोन, क्वार्जाइट और कायान्तरित शैलों के साथ ग्रेनाइट एवं नीश की प्रमुखता है।

धरातलीय संरचना

धरातलीय संरचना का विस्तार असामान्य होने के कारण बस्तर के सबसे ऊँचाई वाला भाग 500 से 2500 फीट तक धरातल मिलता है। भू-वैज्ञानिकों की दृष्टि के आधार पर उत्तरी भाग मैदानी होकर दक्षिणी सीमा तक बनता है। प्राकृतिक दृष्टि से धरातली संरचना को 6 प्रमुख भागों में विभक्त किया गया है। (1) उत्तर का निम्न या मैदानी वाला भाग- इसका विस्तर उत्तर बस्तर परलकोट, भानुप्रतापपुर, कोयलीबेड़ा, अंतागढ़ का क्षेत्र है। केशकाल की घाटी से लेकर यह घाटी तेलीनसती घाटी से प्रारंभ होते हुये जगदलपुर से होकर दक्षिण में स्थित तुलसी डोंगरी तक लगभग 160 वर्ग कि0मी0 के क्षेत्र में फैला हुआ है। (2) केशकाल घाटी - इसका प्रारंभ भाग तेलीन घाटी, सती घाटी से होते हुये जगदलपुर के दक्षिण में स्थित तुलसी डोगंरी तक लगभग 100 वर्ग कि0मी0 के क्षत्रे में फैला हुआ है। (3) अबूझमाड का पहाड़ी क्षेत्र - यह भाग बस्तर के मध्यम में स्थित है। इसके उत्तर पूर्व से रावघाट पहाड़ी घोड़े की नाल के जैसे दिखाई पड़ती है। यहाँ कच्चे लोहे के विशाल भंडार विद्यमान है। इन्द्रावती के दक्षिण में दो प्राकृतिक विभाग है। (4) उत्तर पूर्वी पठार - यह पठार कोण्डागांव से जगदलपुर तक फैला हुआ है इस पठार का ढाल तीव्र है। (5) दक्षिण का पहाड़ी क्षेत्र - इसके अन्तर्गत दक्षिण क्षेत्र दंतेवाड़ा, बीजापुर, कोंटा के उत्तरी क्षेत्र भी आते है। (6) दक्षिणी निम्न भूमि - दक्षिण क्षत्रे के अन्तर्गत कोंटा क्षेत्र का सम्पूर्ण भाग व बीजापुर क्षेत्र का दक्षिण भाग आता है।

जलवायु

प्रत्येक स्थान के निवासियों जिस क्षेत्र में वे निवासरत है वहां की जलवायु का शारीरिक व मानसिक रूप से प्रभाव डालती है। जलवायु वातावरण का समर्थ तत्व है। जिसके आधार पर हम रोज मर्रा के क्रियाकलाप तय करते है। मौसम के परिवर्तन को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव नहीं किया जा सकता है, मनुष्य ही नहीं अपितु उस क्षेत्र के अन्य तत्व धरा, पेड़-पौधे, कृषि, जीव-जन्तु सभी जलवायु से प्रभावित होते है। बस्तर की जलवायु के अनुसार गर्मी का तापमान 41.9 से0ग्रे0 मई में तथा वर्ष भर 20 डिग्री से0ग्रे0 तापमान रहता है। और शीत ऋतु का तापमान 14.5 डिग्री से0ग्रे0 और यहां की बारीश 40 इंच दक्षिण पश्चिम मानसून से होती है। बस्तर क्षेत्र में भी शुष्क आर्द्र व नम प्रदेश पाये जाते हैं।

बस्तर की प्रमुख नदियां

इन्द्रावती; बस्तर की सबसे प्रमुख नदी इन्द्रावती है। इसका उद्गम स्थान रामपुर यआमल नामक स्थान से डोंगरला पहाड़ी के ऊपर से होता हुआ उड़ीसा के कालहाण्डी जिले में है। बस्तर क्षेत्र में इन्द्रावती 264 किमी. की लम्बी यात्रा तय

करती है। इन्द्रावती की कुल 30 सहायक नदियां है। इन्द्रावती नदी को बस्तर (दण्डकारण्य) की जीवन रेखा कहा जाता है।

शबरी; शबरी नदी का उद्‌गम स्थान उड़ीसा क्षेत्र के कोरापुट पठार से निकलती है। बस्तर के दक्षिण क्षेत्र की यह एक प्रमुख नदी है।

कोटरी; कोटरी नदी का उद्‌गम स्थान दुर्ग जिले में है। नदी प्रवाह क्षेत्र दक्षिण-पश्चिम सीमा पर राजनांदगांव, कांकेर, नारायणपुर व बस्तर जिले से होते हुये इन्द्रावती नदी में जा मिलती है।

शंखिनी-डंकनी; यह नदी बैलाडीला क्षेत्र के पर्वत शिखर नंदिराज से प्रवाहित शंखिनी व टांगरी डोंगरी से प्रवाहित डंकनी बस्तर की प्रमुख नदियां है। दंतेवाड़ा में इन दोनों नदियां का संगम हो जाता है।

चिंतावायु; यह नदी भोपापट्‌टनम क्षेत्र में प्रवाहित होती है। इन्द्रावती प्रमुख सहायक नदी है जो बीजापुर से निकलते हुए कुटरू की उत्तर-मध्य से प्रवाहित होती है।

दूध नदी; इस नदी का उद्‌गम क्षेत्र कांकेर से 17 कि0मी0 दूर मालजकुड़म पहाड़ी स्थल से उद्‌गमीत होती है। यह नदी अपने दुधिया रंग के कारण दूध नदी नाम पड़ा।

महानदी; महानदी धमतरी के पास सिहावा नगरी के पास श्रृंगी ऋषि पर्वत से उद्‌गमित होती है।

गोदावरी नदी; गोदावरी नदी दक्षिण बस्तर की सबसे बड़ी नदी है। यह भद्रकाली के पास बस्तर जो मध्यप्रदेश की सीमा बनाती है। बस्तर की प्रमुख इन्द्रावती व शबरी नदी गोदावरी की प्रमुख सहायक नदियां हैं।

नारंगी नदी; नारंगी नदी कोण्डागांव से निकलती है। यह वहां की प्रमुख नदी है। नारंगी नदी चित्रकूट मे जाकर मिलती है।

गुडश नदी; नारायणपुर जिले की प्रमुख नदी गुडरा छोटे डोंगर की चट्‌टानों के मध्य से निकलकर अबूझमाड़ क्षेत्रों में प्रवाहित होती है। और यह नदी बारसुर के पास इन्द्रावती में मिलती है।

मारी नदी; मारी नदी बीजापुर के समीप भैरमगढ़ के दक्षिण-पश्चिम दिशा से निकलकर बीजापुर क्षेत्र में प्रवाहित होती है।

वनस्पति

बस्तर के सघन वनों में दुर्लभ जड़ी-बुटिया बहुतायत मात्रा में उपलब्ध है। बस्तर के जनजातीय वर्ग इन्हीं औषधियों से स्वास्थ्य लाभ लेते आ रहे है। बस्तर क्षेत्र का लगभग 54 प्रतिशत भाग वनों से भरा है। जलवायु विभिन्नता के कारण बस्तर वनस्पतियों में भी विभिन्नता देखी जाती है। बस्तर के वन क्षेत्रों में सर्वाधिक वन क्षेत्र का 36 प्रतिशत साल के वृक्ष है और दूसरा वन क्षेत्र सागौन का है। इसके अलावा तीसरे नम्बर पर बांस भी बस्तर के विशाल क्षेत्रों में पाया जाता है। बस्तर वन से साल, सागौन व बांस, के अतिरिक्त यहां बीजा, साजा, कर्रा, धौड़ा, धीवन, महुआ, हरी, तेन्दु आदि वृक्ष पाये जाते है। इस प्रकार बस्तर में मिश्रित वन पाये जाते है।

बस्तर के जंगलों में जड़ी -बूटियों की भी अधिकता है। जैसे- ब्रम्ही सफेट, वोकाली, मुसली, कामराज, तेजराज, भोज-रादा, दशमूल, चिरायता, पीपरामूल, तेलियाकंद, सेमनकंद, करंगी, रीठा, जापड़ा, रियविडंग, सुंदरी, रसना आदि जड़ी - बूटियां उपलब्ध हैं।

मिट्‌टी

प्रकृति प्रदत्त संसाधनों में मिट्‌टी संसाधन का बहुत ही हिस्सा है। बस्तर में मिट्‌टी को कन्हार मिट्‌टी, मटासी, डोरसा मिट्‌टी, भाटा मिट्‌टी, में विभक्त किया गया है। काली चिकनी मिट्‌टी को कन्हार मिट्‌टी कहते है। यह मिट्‌टी बस्तर, जगदलपुर, बकावण्ड, तोकापाल क्षेत्रों में पाई जाती है। मटासी मिट्‌टी का रंग पीला होता है। यह मिट्‌टी दुर्गकोंदल, कोयलीबेड़ा, बीजापुर, गीदम, दंतेवाड़ा, अंतागढ़ क्षेत्रों में पायी जाती है। भाटा मिट्‌टी बस्तर के पहाड़ी व पठारी भाग में उपलब्ध है। डोरसा मिट्‌टी यह मिट्‌टी विश्रामपुरी, फरसगांव, नारायणपुर, कोण्डागांव स्थानों में मिलती है।

कृषि

प्राचीन काल से या मानवीय सभ्यता के पुरातन काल से लेकर वर्तमान युग तक कृषि मानव जीवन का मेरूदण्ड रहा है। बस्तर रियासत की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि रहा है। बस्तर की कृषि मुख्यतः वर्षा पर निर्भर है। यहां पर खरीफ फसल में धान, कोदो, मक्का का उत्पादन होता है व रबी की फसल में तिलहन, दालें, गेंहूँ, अरहर, उड़द, गन्ने का उत्पादन होता है।

राजनीतिक पृष्ठभूमि

प्राचीन काल में बस्तर चित्तरकोट, चटकोटय मंडल, दण्डकारण्य, महाकांतर, चक्रकीट आदि नामों से जाना जाता था। भारतीय इतिहास में भी बस्तर का एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। छत्तीसगढ़ रियासतों में बस्तर का रियासत सबसे बड़े रियासतों में एक रहा है। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत बस्तर रियासत की गिनती बारहवीं बड़ी रियासतों में आता था। जो तत्कालीन मध्यप्रान्त तथा मद्रास प्रेसीडेंसी के मध्य थी यह $17^0$46'' उत्तरी तथा $20^0$14'' उत्तरी अक्षांश तथा $80^0$15'' और $82^0$15'' पूर्वी देशांत के मध्य स्थित थी। वर्तमान स्थति में बस्तर क्षेत्र के पूर्व में उड़ीसा, दक्षिण में आंध्रप्रदेश, पश्चिम में महाराष्ट्र तथा उत्तर में कांकेर एवं रायपुर जिले की सीमाओं को स्पर्श करती है। ब्रिटिश नियंत्रण के अंतर्गत बस्तर रियासत का क्षेत्रफल 13725 वर्ग कि0मी0 था। बस्तर रियासत वन संपदा से परिपूर्ण व आदिवासी बहुल क्षेत्र था। बस्तर रियासत की राजधानी जगदलपुर को बनाया गया था। शिलालेखों, ताम्रपत्रों, तथा भूमिगर्भ से मिली सोने के सिक्के इत्यादि चक्रकूट अथवा बस्तर में नल राजवंश शासन होने को प्रभावित करता है। दक्षिण भारत के चालुक्य कीर्तिवर्मन प्रथम (566 ई0) ने नलों के विरूद्ध युद्ध किया नलों को पराजित किया और विजयी हुए। नंदराज के प्रपौत्र ने 605-630 ई0 तक शासन किया। उस समय तक नल शासक कमजोर हो गये थे। नलों के बाद नाग राजवंशों ने इस अंचल पर नये राज्य की स्थापना की।

नागवंशों के कई शिलालेख बस्तर में प्राप्त हुये है। उनका उल्लेख चक्रकाटे के राजा के रूप में हुआ है। नागवंशीय शासकों ने अपनी राजधानी बारसुर को बनाया था। चक्रकोट के नागवंशीय नृपतियों के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि उन्हें छिंदक कुल कहा गया है। यह उल्लेख भी है चक्रकोट में छिदंक नाग सत्ता का संस्थापक नृपति भूषण था। नृपति भूषण के पश्चात् जगदेक भूषण नागवंश का दूसरा शासक हुआ। नागवंश का अंतिम शासक हरिचन्द्र को माना जाता है। इस शासक का शिलालेख शक संवत् 1246 में 1324 ई0 में प्राप्त हुआ था। बस्तर की प्रचलित पारंपरिक वर्णन से प्राप्त काकतीय राजवंश के अन्नमदेव ने हरिचन्द्र को परास्त कर बस्तर पर अधिकार कर लिया था। भोपालपट्टनम, बीजापुर, बारसुर, दंतेवाड़ा, हमीरगढ़, कोटपाड़, चक्रकोट इन सभी क्षेत्रों में काकतीय राजवंश की स्थापना की नींव रखी। 1139 ई0 में अन्नमदेव की मृत्यु हुई इन्होंने कुछ 25 वर्षों तक शासन किया। इनके पश्चात् हमीरदेव यहां के शासक हुये व तीसरे में भैराजदेव व उनके बाद पुरूषोत्तम देव व पांचवे में जयसिंह हुये छठवें में नरसिंह देव व सातवें शासक के रूप में प्रतापदेव व आठवें में जगदीश राय और वीरनारायण नवें पर बने व दसवें शासक के रूप में वीरसिंह उनके बाद दृगपाल देव व बारहवें शासक के रूप में रक्षपाल देव (राजपाल) उनके बाद दलपतदेव हुये इनके बाद प्रतापसिंह उनके बड़े भाई ने मराठों के साथ मिलकर बस्तर को जीत लिया। परंतु दलपतदेव हार नहीं माने व अपनी सैनिक तैयारी से मराठों पर आक्रमण कर उन्हें परास्त किया। इसके बाद उनके पुत्र दरियादेव व अजमेर सिंह के बीच सिंहासन के लिये सघंर्ष हुआ।

बस्तर के राजनीतिक इतिहास पर अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि राज्य पर प्राचीन काल से वर्तमान समय तीन शासकों का शासन काल अधिक समय तक था। नलों, नागों और काकतियों का। अंत में काकतियों के शासन काल में उनकी शक्ति कम होने लगी जिससे बस्तर रियासत मराठों व अंग्रेजों के अधीन हो गई।

संदर्भ ग्रंथ

बेहार, रामकुमार(2003) - छत्तीसगढ़ी संस्कृति और विभूतियां, छ0ग0 शोध संस्थान, पृष्ठ संख्या 27,28,30

जगदलपुरी लाला(2007) - बस्तर इतिहास एवं संस्कृति, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ संख्या - 81,82,83,84,85,86, 87,88,89, 90,91,92,93,94,95,96,97,98,99,100

सिंह, सत्यप्रकाश(2013) - आमचो बस्तर, शिक्षादूत प्रकाशन, रायपुर, पृष्ठ संख्या 78,79,81

गौड़, शदचंद्र गौड़, कविता(2010) - बस्तर एक खोज, विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर, पृष्ठ संख्या 19,20,21,22,23,24,25,26

वर्त्यानी, जे0आर0 साहसी, व्ही0डी0(1998) - बस्तर का राजनीतिक एवं संस्कृति इतिहास, दिव्या प्रकाशन, कांकेर (2,4,11,12)

बेहार, रामकुमार(1995) - बस्तर आरण्यक, छ0ग0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर, पृष्ठ संख्या 70,71

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777
भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,9-13**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 22 दिसम्बर 2021

''ऋतु बसंती : एक अध्ययन''

डॉ० आशा वर्मा*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *''ऋतु बसंती : एक अध्ययन''* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखिका मैं *आशा वर्मा* घोषणा करती हूँ कि लेखिका के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेती हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देती हूँ। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इस छपने के लिये भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देती हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देती हूँ।

अपनी सौम्य मेधा और अद्‌भुत जिजीविषा के बल पर शारीरिक विकलांगता को पराजित कर अध्ययन, मनन, चिन्तन तथा आत्ममंथन करके हिन्दी साहित्य क्षितिज को स्पर्श करने वाले आत्रेय पुरस्कार से सम्मानित डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। आपने अपनी समीक्षा-शक्ति से न केवल हिन्दी साहित्य जगत में विशिष्ट पहचान बनायी है, बल्कि मन-पाँखी, स्वर्ण जयन्ती वर्ष गीत श्री, ऋतु बसंती, आत्ममंथन लोकतान्त्रिक भारत में तथा देवी, माँ, सहचरी, प्राण जैसी अनेक काव्यकृतियाँ प्रदान कर हिन्दी काव्य जगत को समृद्ध बनाया है। आपकी इन काव्योपलब्धियों में प्रेम, प्रकृति, सामाजिक यथार्थ, राष्ट्रीय चेतना भ्रष्टाचारी राजनीतिकों के प्रति आक्रोश जैसे अनेक स्वर मुखरित हुए हैं। इन काव्य रचनाओं में डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त कृत 'ऋतु बसंती' विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

'ऋतु बसंती' डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त की 65 कविताओं का संग्रह है। यह पुस्तक सन् 2006 में अभिलेख प्रकाशन, बरेली से प्रकाशित हुई है। संयोग से इस पुस्तक के प्रकाशन के समय आपकी आयु भी 65 वर्ष की थी। 'ऋतु बसंती' की अधिकांश कविताएँ शृंगार रस से परिपूर्ण हैं और शृंगार ही इस काव्य संग्रह का मुख्य तत्व होते हुये भी आपने इस काव्य संग्रह का श्रीगणेश सरस्वती वन्दना से किया है। काव्य-संग्रह का प्रारम्भ सरस्वती वन्दना से करके कवि ने भारतीय परम्परा का निर्वहन किया है।

सरस्वती वन्दना

नवल तन मन, नवल जीवन, नवल स्वर भर दे। जयति जय, शारदे! वर दे।। है अखिल ब्रह्माण्ड तेरी, मधुर वीणा से निनादित/ ज्ञान स्रोत अजस्र युग-युग से रहा आया प्रवाहित/ भाव मंजुल भरत-भुवि में आरती भर दे,/ चिर सरस कर दे। जयति जय, शारदे! वर दे।। हम हिमालय-सा अचल उन्तुंग बन जाएँ/ हम पवन-सा मस्त औ उन्मुक्त बन जाएँ/ तूलिका

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा हिन्दी विभाग, डी0बी0एस0 कॉलेज, कानपुर (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

से रिक्त उर में, नवल रंग भर दे/ थी, सुधी कर दे। जयति जय, शारदे! वर दे।। पांचजन्यम् आर्य संस्कृति का गूँजे सन्तवर/ विश्व में वीणा निनादित हो पुनः सस्वर/ पृथक प्रान्तर पृथक तन, परएक मन कर दे,/ विनत हम सब हे। जयति जय, शारदे! वर दे।।[1]

काव्य संग्रह का प्रारम्भ सरस्वती वन्दना से और अन्त ऋतु बसंती नामक कविता से किया है, जिसमें एक ओर तो आध्यात्मिक प्रवृत्ति दिखाई देती है तो दूसरी ओर आशिकाना मिजाज :

ऋतु बसंती, हो रहा है जग बसंती/ मन बसंती, हो रहा है तन बसंती/ फूल सरसों, गँध की आवाज देकर/ टेरती, दिखला, तुम्हारा मन बसंती/ गुदगुदाये चाह -/ मुझको कामना की। क्यों पुकारे गंध -/ मुझको वासना का?[2]

डॉ0 गुप्त ने 'ऋतु बसंती' में प्रेम तत्व को प्रमुखता प्रदान की है। प्रेम जीवन की सबसे व्यापक वृत्ति है 'प्रेम' जगत् का एक चिरंतन सत्य है। प्रेम भावना हृदय का सवोत्तम रत्न है। मन की अनेक वृत्तियों में प्रेम की वृत्ति सर्वोपरि तथा सर्वाधिक शक्तिमान है। प्रेम हमारे सर्जनात्मक जीवन की आवश्यकता है। रामनरेश त्रिपाठी के शब्दों में, ''वस्तुतः जीवन की मधुरता को बनाए रखने के लिए प्रेम अति आवश्यक तत्व है। प्रेम मानव को ईश्वर का ऐसा वरदान है जिसे पाकर वह धन्य हो उठता है।''[3] 'ऋतु बसंती' का मूल स्वर प्रेम होने के कारण इसकी अधिकांश कविताएँ शृंगार रस से सराबोर हैं। इसमें शृंगार रस मन को अभिसिंचित कर तन को पुलकित करने वाला है। शृंगार की इन मधुर मोहक छवियों का आकर्षण इतना प्रबल है कि अनायास ही मन खिंचा चला जाता है। 'ऋतु बसंती' में ऐसे स्थल कम ही हैं जहाँ कवि ने अभिसार की अभिलाषा व्यक्त की हो क्योंकि कवि भी यह जानता है कि अभिसार में सब कुछ नहीं है। प्रेम की प्रगाढ़ता संयोग की अपेक्षा वियोग के क्षणों में अधिक होती है। यही प्रेम की कसौटी है। प्रेम की व्यापकता विरह से उत्पन्न होती है तभी प्रेमीजन के हृदय के वास्तविक उद्‌गार निकलकर आते हैं। प्रियतमा के रूठ जाने पर कवि हृदय को ऐसा अनुभव होता है मानो उसका सारा संसार ही रूठ गया हो और संसार उसके लिए शून्यवत हो गया है। विरह की यह तीव्र अभि-व्यंजना गुप्त जी की कविताओं की विशेष विशेषता है। विरह व्यथित कवि हृदय से कुछ इस प्रकार भाव प्रस्फुटित होते हैं :

सुधि क्या आई तुम्हारी, मैं बेसुध हुआ। कैसे समझाऊँ मन को, न माने मेरी।। ताप से तप्त तन, झीण जर्जर हुआ। नैन मोती जो मचले, तो रुकते नहीं।। कैसे जीवन बिताऊँ, कहाँ प्राणधन किससे कह मन व्यथा, उर में धीरज धरुँ?/ उर प्रकम्पित, सिहरता कुँवारा बदन। हा न आए घड़ी कि मैं तुम बिन मरूँ।।[4]

जो सघन कुंज की छाँह थी पालती/ अब नहीं वह परश, शूल-सी सालती/ वह पवन जो कि सौरभ ही देता रहा/ आज बन लू की लपटें जलाता बदन/ यह विरह की जल है न इसकी दवा। तुम क्या बदले जमाने की बदलती हवा।।[5]

'ऋतु बसंती' की कविताओं में लोकगीतों की मधुर रागिनी भी है और अन्तःकरण की प्रेमात्मा का मार्दव भी है। लोकगीतों की तरलता निम्नांकित गीत में दर्शनीय है :

खोई खोई आँखों में, चलती बयार है। पाने को प्रियतम का प्यार चली। दुल्हन ससुराल चली।। अधरों में लाली है हाथों में मेंहदी/ माँग में सिन्दूर भरा, माथे पर बिन्दी। सजकर के सोलह शृंगार चली। साजन का पाने दुलार चली। दुल्हन ससुराल चली।।[6]

कवि काव्यरूपी संसार का विलक्षण सृष्टिकर्ता है, जिसकी भावना के अनुसार विश्व के नियम परिवर्तित होते हैं। वह संसार को अपने हृदय के रस से जिस रूप से सिंचित कर देता है, वह उसी रूप में परिणत हो जाता है। यदि कवि का हृदय भावों से आपूर्ण हुआ तो संसार प्रेम-प्रवण होकर मधुर धाराप्यापित हो जाता है और यदि वह वीतराग हुआ तो संसार भी नीरस बन जाता है। वस्तुतः कामाध्यात्म की चेतना इतनी प्रबल है कि गुप्त जी उसकी शाश्वती प्रभा के आलोक में अनेकशः काव्य बिम्बों का चित्रांकन करते हैं। 'ऋतु बसंती' का गायक प्रश्न करता है कि मुझको वासना की गंध क्यों पुकार रही है? :

आयु के बंधन रहे हों शिथिल पल पल/ मान मर्यादा बहे पाषाण गल गल/ है सरकती जा रही थी - बुद्धि शृंखल/ विंध रहे उर प्राण, तेरे रंग बसन्ती/ मिट मिलूँ, तुझमें/ प्रिय इतनी साधना की। क्यों पुकारे गंध -/ मुझको वासना की?[7]

प्रेमपरक कविताओं के साथ-साथ कहीं-कहीं कवि ने अपने मन की व्यथा की है 'गाऊँगा मैं दुःख में भी', 'निरर्थकता बोध', 'मुझे दुःख क्यों दिया?', 'आत्मबोध', 'सागर तट पर', जिजीविषा जैसी कविताओं में कवि हृदय की पीड़ा सघनता से मुखरित हुई है - एक उदाहरण 'मुझे दुःख क्यों दिया' कविता से दर्शनीय है :

ओ मेरे विधाता! मुझे दुःख क्यों दिया?/ जो है एक से सब तुम्हारी नज़र में/ तो मेरे विधाता! मुझे दुःख क्यों दिया?/ सभी तो जगत् में सुखी दीखते हैं/ मुदित हर्ष में वे सभी झूमते हैं/ लो है कूक उठी कोयलिया वनों में/ भ्रमर टोलियाँ जा रही उपवनों में/ मेरे भाग्य में ही तो रोना लिखा क्यों/ ओ मेरे विधाता! मुझे दुःख क्यों दिया[8]

जीवन में सुख-दुःख तो आते ही हैं कोई व्यक्ति दुःखों का सहन न कर पाने के कारण ही अनास्थावादी बन जाता है पर कोई व्यक्ति अपार दुःख सहकर भी आस्थावादी बना रहता है। दुःख में भी आस्थावादी बना रहने वाला व्यक्ति सच्चे अर्थों में आस्तिक होता है। डॉ0 गुप्त जी का रूप आस्थावादी दिखाई देता है :

समदर्शी हो सबसे पालक/ पर जो मरा तुम्हारे कारण,/ होगी तब बदनामी, स्वामी/ अब मत यूँ अलसाओ।/ आओ, प्रियतम आओ।।[9]

डॉ0 गुप्त का रचनाक्रम - आस्था, विश्वास का अनुगामी है, इनकी रचनाएँ अंधेरे के विरुद्ध तनकर खड़े दीपक की संघर्ष गाथा का वाचन करती हैं - भोर के आगमन पर मन को अरुणिम आभा से भर देती है पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :

लगा उन्माद में पागल/ पवन भी गुदगुदाने अब/ तिमिर आवृत गगर पर रे/ उजाला छा गया है अब/ दिशा, प्राची, उषा स्वर्णिम किरण ले झाँक उठी है। प्रभाती के खुले स्वर में, सुनाता कौन वीणा है?[10]

वर्तमान परिवेश में परम्पराओं और रूढ़ियों के प्रति विभिन्न प्रकार के नाकरात्मक तेवर दिखाई देते हैं। अनेक प्रकार के प्रतीकों और बिम्बों के माध्यम से कवियों नष्टप्रायः परम्पराओं के बोझ को उतार फेंकने के लिए संकल्पबद्ध दिखाई दे रहे हैं। इन पुरानी घिसी-पिटी परम्पराओं के प्रति कवियों में आक्रोश है और वे हरहाल में इनसे छुटकारा पाना चाहते हैं। डॉ0 गुप्त जी की कविताएँ भी टूटती हुई सामाजिक परम्पराओं को को व्यक्त करने में सफल रही हैं। आज का व्यक्ति अपने प्रेम पात्र को पाने के लिए अपने सभी रिश्तों की कुर्बानी देने को तैयार है :

बहनें भाई नहीं चाहती/ भाई बहनों को न चाहें/ पुत्रपिता को नहीं चाहता/ संताने तजती माताएँ/ नारी चाहे मात्र पुरुष को/ पुरुष मात्र नारी को/ रिश्ता एक युग युग का, सृष्टि चाहती है/ जवानी प्यार चाहती है।[11]

डॉ0 गुप्त जी की इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि वर्तमान परिवेश में पारिवारिक रिश्ते टूटते चले जा रहे हैं। नयी पीढ़ी पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करने लगी हैं। वे पारिवारिक बन्धनों में बंधकर नहीं रहना चाहते हैं। स्वार्थ के बढ़ते हुये पंजों ने व्यक्ति-व्यक्ति की आत्मीयता को दबोच लिया है। अपने ही लोग बेगाने हो जाते हैं। जिसको उन्होंने अपने प्राणों से भी अधिक चाहा, जिस पर स्वयं से भी ज्यादा भरोसा किया, जिसको अपना हम-सफर समझा आज वे ही दगा दे गये। कवि का अन्तर्मन व्यथित हो उठा :

थे हमारे हम सफर जो/ पा चुके मंजिल सभी तो,/ बात भी करते नहीं वे/ चाहने वाले रहेजो/ जिंदगी की दौड़ में अब, पंगु हूँ, न रह सकूँगा। अब न मैं यूँ जी सकूँगा।[12]

मनुष्य जिस देश में जन्म लेता है, जिस धरती की धूल में वह पलता है और जिस देश में रहकर अपने सपने को साकार करता है उस देश के प्रति प्रेम और श्रद्धा रखते हुये अपना सर्वस्व देश पर न्यौछावर कर देने की कामना प्रत्येक मनुष्य के हृदय में रहती है। देश प्रेम की भावना से ओत-प्रोत गुप्त जी की 'ऋतु बसंती' के गीतों में देश प्रेम के भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। भारत की उर्वरा धरा, यहाँ की संस्कृति एवं प्राकृतिक छटा का वर्णन डॉ0 गुप्त जी ने इस प्रकार किया है :

धरती यह भारत की/ सोना अब उगलेगी। निबिया की डाली पर/ गौरैया चहक उठी/ बगिया के कोने पर/ कोयलिया कुहुक उठी/ प्राची का मलय पवन कानों में कहता है...../ सौरभ सर्वोदय की/ घर-घर में महकेगी/ धरती यह भारत की/ सोना अब उगलेगी।[13]

सुख-शान्ति, हरियाली और धन-धान्य से समृद्ध हमारे देश में धर्म, जातिवाद, भ्रष्टाचार पनपने लगा है। धर्म को लेकर लोग एक-दूसरे के खून के प्यासे हो गये हैं। भाई-भाई आपस में लड़ने लगे हैं। देश की ऐसी स्थिति को देखकर कवि हृदय चिंतित हो उठता है। इसलिए वे देश की युवा पीढ़ी से देश को बचाने को आवाहन करते हैं :

क्रान्ति का आवाहन युवक! जागो।। धरती के वीर पुत्र जागो।। चतुर्दिक अन्धकार, महा मोह तम विकार/ लूटमार, छीन-झपट, हिंसा सर्वस्य सार/ भूख प्यास औ, अकाल, अनावृष्टि अनाचार/ जरा जीर्ण वृद्ध बाल, नारी का चीत्कार/ करता मार्मिक पुकार, जागो। धरती के वीर पुत्र जागो।।[14]

राजनीति साहित्यकार का उद्देश्य नहीं हो सकती, परन्तु फिर भी साहित्यकार इससे अछूता नहीं रह सकता, वह अपने समय की राजनीतिक हलचलों से येन-केन प्रकारेण अवश्य ही प्रभावित हो जाता है। कवि की रचनाधर्मिता में राजनीतिक संलग्नता नहीं पाई जाती, फिर भी अपनी लेखनी के माध्यम से समकालीन राजनीतिक परिदृश्य की विद्रूपता को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। कवि डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त में अतुलनीय साहस है, वे बिना किसी भय के राजनेताओं का नामोल्लेख कर उनकी भ्रष्टता, अत्याचार, स्वार्थपरता का कच्चा चिट्ठा खोलते हैं। कवि ने बसपा की मुख्यमंत्री मायावती की व्यंग्यात्मक शैली में खूब खबर ली है। कवि का मानना है कि मायावती दलितों का उद्धार करने के बजाय अपना उद्धार कर रही हैं। कवि ने कबीर के फक्कड़ाना अन्दाज में मायावती को ठगिनी तक कह दिया; '' दलित हितों का नारा देकर/ कूटनीति में चतुर, झूठ में दक्ष, न जाने क्या मन में ठानी। ठगिनी, यह माया महारानी।''[15]

कवि ने उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त सामाजिक त्यौहार दीपावली पर्व के विषय में विशेष रूप से लेखनी चलायी है। 'दीपावली', 'मेरी दीवाली', 'दीपमलिके' इत्यादि कविताएँ सामाजिक पर्व की ओर कवि की प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करती हैं। उनकी यह प्रतिबद्धता भारतीय संस्कृति के अनुरक्षण की ओर भी संकेत करती हैं। कवि ने पूँजीवाद के बढ़ते वर्चस्व को देखते हुये 'पूँजीपतियों से निवेदन' किया है कि पूंजीवादी विचारधारा को त्यागकर समतावादी विचार अपनाएँ तभी सम्पूर्ण समाज का कल्याण सम्भव है। 'काव्य के हेतु' कविता के माध्यम से कवि ने स्पष्ट करना चाहा है कि प्रेम, शृंगार, प्रकृति आदि से कविता लिखने की प्रेरणा तो अवश्य मिलती है परन्तु अच्छी कविता वही होती है जिसमें सर्वे भवन्तु सुखिनः का सार छिपा हो, ऐसी कविता हर युग में प्रासंगिक होती है। उसकी उपादेयता कभी भी समाप्त नहीं होती है।

इन कविताओं से स्पष्ट है कि कवि कितनी भी प्रेम-शृंगार की कविताएँ लिखे परन्तु वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों से अप्रभावित नहीं रह सकता। कहीं न कहीं ये प्रभाव उसकी कविताओं में अवश्य ही परिलक्षित हो ही जाते हैं। निराशा, हताशा, पीड़ा, कुण्ठा की धूप से तपते हुये व्यक्ति के लिए ऋतु बसन्ती निश्चित ही रस की झमाझम बारिश के समान तापहारिणी सिद्ध होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[1]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त (2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 9, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[2]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 111, अभिलेख प्रकाशन, बरेली, सन्-2006

[3]डॉ0 जगदीश गुप्त -*हिन्दी की स्वच्छंदतावादी काव्यधारा का दार्शनिक विवेचन,* प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या 19, प्रगति प्रकाशन, आगरा।

[4]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 23, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[5]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 25, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[6]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 16, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[7]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 112, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[8]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 12, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[9]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 61, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[10]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 55, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[11]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 26, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

[12]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 50, अभिलेख प्रकाशन, बरेली
[13]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 30, अभिलेख प्रकाशन, बरेली
[14]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 33, अभिलेख प्रकाशन, बरेली
[15]डॉ0 सुरेश चन्द गुप्त(2006) -*ऋतु बसंती,* पृष्ठ संख्या 106, अभिलेख प्रकाशन, बरेली

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777

भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,14-16**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 15 मार्च 2022

नवजागरण और स्त्री-प्रश्न

डॉ० विजयलक्ष्मी*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *नवजागरण और स्त्री-प्रश्न* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखिका मैं *विजयलक्ष्मी* घोषणा करती हूँ कि लेखिका के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेती हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देती हूँ। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इस छपने के लिये भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देती हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देती हूँ।

'नवीन चेतना' का बोधक नवजागरण शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग हिन्दी में पहली बार मार्क्सवादी आलोचक डॉ0 रामविलास शर्मा ने 1977 ई0 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और नवजागरण' में किया। विचार तथा व्यवहार के स्तर पर नवीन चेतना का जागरण नवजागरण है। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद भारत के हिन्दी प्रदेशों में राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जागरण की प्रक्रिया का पहला चरण आरम्भ होता है। इस प्रक्रिया का दूसरा चरण भारतेन्दु युग और तीसरा चरण द्विवेदी युग को माना जाता है।

नवजागरण की चेतना के परिणामस्वरूप जिस प्रकार अनेकानेक सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक समस्याओं के समाधान हेतु आन्दोलनों का जन्म हुआ उसी प्रकार सदियों से उपेक्षित और शोषित स्त्री की दयनीय दशा पर भी वैश्विक स्तर पर गरमा-गरम बहस आरम्भ हो गयी। यूरोप में फ्रांसीसी क्रांति के बाद स्त्री जागरुकता का विस्तार होता गया। रूस में 'स्त्री-प्रश्न' केन्द्रीय मुद्दा बन गया।

19वीं सदी के मध्य तक भारत में भी बंगाल और महाराष्ट्र में समाज सुधारकों ने स्त्रियों से सम्बन्धित समस्याओं के विरुद्ध आवाज उठाना आरम्भ कर दिया। हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को नवजागरण का पुरोधा कहा जाता है। नवजागरणकालीन हिन्दी लेखकों के विचारों का विश्लेषण करने पर एक बात सुनिश्चित रूप से उभरकर सामने आती है कि इन लेखकों की दृष्टि स्त्री-प्रश्न को लेकर अन्तर्विरोध से ग्रस्त है। स्वयं भारतेन्दु जी लड़कियों के लिए आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा को दरकिनार करके लिखते हैं ''ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुल-धर्म सीखें, पति की भक्ति करें और लड़कों को सहज में शिक्षा दें।'' वहीं भारतेन्दु जी लड़कों को दी जाने वाली गृह-शिक्षा का विरोध करते हैं। भारतेन्दु जी ने स्त्री शिक्षा को चरित्र-निर्माण और घरेलू प्रबंध कौशल मात्र से जोड़कर देखा। विवेकानन्द, केशवचन्द्र सेन, ज्योतिबा फूले आदि अन्य नवजागरणकालीन विचारकों का मन्तव्य भी इससे भिन्न नहीं है। इन सभी ने स्त्री-शिक्षा पर अत्यधिक बल दिया जिससे स्त्रियाँ घर के अन्दर की अपनी भूमिका का निर्वाह ठीक और भली प्रकार कर सकें।

* सहायक प्राध्यापिका, हिन्दी विभाग, ज0ता0ग0डिग्री कॉलेज (सम्बद्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय) प्रयागराज (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

प्रताप नारायण मिश्र के अनुसार जो प्रतिष्ठा, जो अधिकार, जो गौरव पुरुषों का है वही स्त्रियों का भी है। समानता का यह भाव नवजागरण है। परन्तु मिश्र जी ने पतिव्रता भाव और सती होने पर बल दिया। सती होने से उनका अर्थ- ''पति के विरह रूप अग्नि में ऐसा दुःख अनुभव करें कि जीते जी मर जाने के समान।'' स्त्री की सार्थकता मात्र पति-भक्ति में देखना तत्कालीन अन्तर्विरोध से ग्रस्त दृष्टि का ही प्रमाण है। नवजागरण की प्रक्रिया के अगले चरण के रूप में बालकृष्ण भट्ठ के स्त्री संबंधी विचार अधिक मुखर और स्पष्ट हैं। उनका स्पष्ट मत है कि ''स्त्रियों की दशा में जब तक परिवर्तन न होगा कुछ न हो सकेगा।'' उन्होंने स्त्री शिक्षा को घर-गृहस्थी और बच्चा-पालन कौशल से जोड़कर नहीं देखा। उनके अनुसार स्त्री शिक्षा से स्त्री की विवेक शक्ति बढ़नी चाहिए जिससे उनके समक्ष हिन्दू धर्म की सब पोल खुल जाए और यह ठीक-ठीक मन में बैठ जाए कि जो हम कर रहीं है और अब तक करती आयीं हैं, धर्म का आभास मात्र निरा अधर्म है। स्त्री शिक्षा का उद्देश्य पुरुषवादी धार्मिक षड़यंत्रों से स्त्री को मुक्त करना है। परन्तु भट्ठ जी स्त्रियों के लिए विदेशी स्वच्छंदता को स्वीकार नहीं करते। वे समझ गए थे कि परिस्थितियों के बरक्स ''धीरे-धीरे यह काम सिद्ध होगा।''

वस्तुतः सनातन धर्म और रूढ़िवादी पंडितों की परम्परा को संरक्षण देने वाले पितृ-सत्तात्मक समाज में विशेषतः स्त्री से सम्बन्धित कोई भी परिवर्तन झटके से नहीं किया जा सकता। बल्कि क्रांतिकारी परिवर्तन का विचार विपरीत परिणाम देने वाला हो सकता है। इसीलिए नवजागरणकालीन विचारक पुरुष सत्तात्मक मानसिकता में धीरे-धीरे सेंध लगाने में ही समझदारी समझते थे। परम्परागत मानसिकता को पुष्ट करते हुए स्त्री शिक्षा में वृद्धि करना ही इन लेखकों का उद्देश्य था। चरित्र निर्माण, गृहस्थी कौशल जैसे उद्देश्य के लालच में पुरुष मानस धीरे-धीरे स्त्री शिक्षा के समर्थन में तो आ ही जाता। बस एक बार स्त्री शिक्षित होने लगे तो वह शिक्षा की कदर स्वयं समझने लगेंगी। इन लेखकों में जो अन्तर्विरोध दिखाई पड़ता है उसका कारण समाज की ठोस वास्तविकता है। इन लेखकों ने न्यूनतम से शुरुआत की। भारतेन्दु द्वारा स्त्रियों के लिए निकलने वाली 'बालाबोधिनी' नाम की पत्रिका में यदि श्रृंगारिक रचनाएं प्रकाशित होतीं तो बहुत सम्भव था कि यह पत्रिका स्त्रियों के हाथ तक न पहुँच पाती।

प्रश्न उठता है कि उस समय किसी भी तरह के स्त्री-अधिकारों की चेतना स्वयं स्त्रियों में थी या नहीं? यह बात भी निर्मूल नहीं हो सकती कि उस समय स्त्री की ओर से उठने वाली आवाज को उपेक्षित करके कठोरता से दबा दिया गया है।

ऐसी ही एक दबी आवाज है 1882 ई0 में रचित 'सीमंतनी उपदेश' नामक पुस्तक जो एक 'अज्ञात हिन्दू औरत' के द्वारा रचित है जिसे डॉ0 धर्मवीर ने 1984 में खोजा। इस पुस्तक में स्त्री समाज के लिए तर्क और विवेक की वह शक्ति है जिसमें वास्तविक नवजागरण मूर्त्त होता है। मनुष्य मात्र की समानता नवजागरण की अनन्य पहचान है। अज्ञात हिन्दू औरत सलाह देती है- ''पहले उन किताबों को आग में फूँक दो जिनमें स्त्रियों के वास्ते इस धर्म की हिदायत है और मर्दों के वास्ते कुछ नहीं।''

इसी प्रकार दुःखिनीबाला जिनकी 1915 से 1916 तक 'स्त्री दर्पण' में धारावाहिक के रूप में प्रकाशित पुस्तक 'सरला : एक विधवा की आत्मजीवनी' को प्रज्ञा पाठक ने 2005 में खोजकर 'कथादेश' में प्रकाशित कराया। यह हिन्दी में किसी स्त्री के द्वारा आत्मकथा लिखने का पहला प्रयास है। इस पुस्तक में आत्मकथाकार सरला एक ऐसे स्वर्ग की कल्पना करती हैं जहाँ स्त्री-पुरुष की हैसियत में कोई फर्क नहीं है और दोनों बराबर आजादी के साथ जिंदगी जीते हैं। दुर्भाग्यपूर्ण है कि काफी दिनों तक इस पुस्तक की कोई चर्चा नहीं हुई।

राजेन्द्रबाला घोष हिन्दी नवजागरण की पहली ऐसी लेखिका थीं जिन्होंने अपने आक्रामक लेखन द्वारा पुरुष सत्तात्मक समाज की बखिया उधेड़ दी। ये बंगमहिला के छद्मनाम से लिखती थीं। इन्होंने स्त्री शिक्षा का नया माहौल बनाया, नारियों के लिए स्वेच्छया पति का चुनाव करने, तलाक देने आदि के अधिकार की मांग की। हिन्दी साहित्य में लम्बे समय तक गुमनाम रहीं।

भारतेन्दु के समकालीन तथा पंजाब में स्त्री शिक्षा का बीज बोने वाले बाबू नवीनचन्द्र राय की बेटी हेमंत कुमारी देवी ने 'सुगृहिणी' पत्रिका का सम्पादन करके स्त्री वैचारिकी और स्त्री स्वतंत्रता की नयी जमीन तैयार की। भारतेन्दु की 'बाला-बोधिनी' से कहीं अधिक 'सुगृहिणी' पत्रिका स्त्री-प्रश्नों से टकराती है, स्त्री को अपना रास्ता खुद बनाने के लिए प्रेरित करती

है परन्तु यह पत्रिका उपेक्षा का शिकार रही।

स्त्री दृष्टि से 19वीं सदी का उत्तरार्द्ध बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह वही समय है जब स्त्री वैचारिकी की जमीन का निर्माण स्वयं स्त्रियाँ कर रही थीं। सन् 1880 से लेकर 1895 तक तीन महत्वपूर्ण स्त्री पत्रिकाओं का जन्म हुआ जिनका सम्पादन खुद स्त्रियाँ कर रहीं थी- सुगृहिणी (1888) हेमन्त कुमारी देवी, भारत भगिनी (1889) हरदेवी, वनिता हितैषी (1893) भाग्यवती।

पंडिता रमाबाई, रख्माबाई, ताराबाई शिंदे आदि अन्य स्त्रियाँ भी नवजागरण काल में स्त्री-प्रश्नों को लेकर संघर्ष करती हैं। 1930 में प्रियंवदा देवी द्वारा विरचित 'विधवा की आत्मकथा' नामक पुस्तक में स्त्री समस्याओं को बड़ी शिद्दत से उठाया गया है। निःसंदेह नवजागरणकाल में ऐसी और भी अनेक स्त्रियाँ रही होंगी जिन्होंने पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्री के दुःखद अनुभवों को बेबाकी से सबके समक्ष रखा होगा परन्तु जड़ समाज की कट्टर मानसिकता को वह अधार्मिक और हानिकारक प्रतीत हुआ होगा जिसके कारण उन्होंने उसे विलुप्त करने की कोशिश की। इस दिशा में चिन्तन और शोध किये जाने की नितान्त आवश्यकता है।

मेरा अपना चिन्तन कहता है कि यदि नवजागरणकालीन हिन्दी क्षेत्र के लेखकों ने भी स्त्रियों की तरह आक्रामक ढंग से स्त्री प्रश्नों को उठाया होता तो उन्हें भी जड़ समाज में कोई स्थान न मिलता। 'नारि नर सम होंहि' की बात इन लेखकों के भीतर भी थी परन्तु इन्होंने ठोस परिस्थितियों के बरक्स सावधानी और सजगता से काम लिया। जिसके कारण इनमें अन्तर्विरोध का आ जाना स्वाभाविक ही थी। दूसरी ओर नवजागरणकालीन चेतना के प्रवाह में सदियों से पीड़ित स्त्रियों का दुःख तीव्र और आक्रामक ढंग से उभरा यह उससे भी ज्यादा स्वाभाविक था।

यह बात बिल्कुल साफ है कि अनेक अन्तर्विरोधों के बावजूद नवजागरणकालीन हिन्दी क्षेत्र के विचारकों और साहित्यकारों ने स्त्री शिक्षा पर बल दिया। स्त्री शिक्षा के प्रति बुद्धिजीवियों में अत्यधिक सजगता के पीछे अन्तर्निहित कारणों को स्पष्ट करते हुए डॉ0 वीरभारत तलवार ने अपनी पुस्तक में लिखा है, ''औपनिवेशिक शासन के अन्तर्गत जब पुरूष स्कूल-कालेजों में अंग्रेजी शिक्षा पाकर निकलने लगे तो उनकी स्त्रियों का अनपढ़ और जाहिल रहना उन्हें खटकने लगा। नये शासन के नियम कायदों और सभ्यता संस्कृति के असर से उनकी अपनी जीवनशैली बदल गयी थी और उन्होंने शिष्टाचार के नये तौर तरीकों को अपना लिया था। अब उन्हें अपने घरों में स्त्रियों के वर्ताव और काम करने के पुराने ढंग फूहड़ और असुविधा-जनक लगने लगे थे।....लिहाजा ये सुधारक समाज के पितृ-सत्तात्मक ढांचे में कोई सुधार किये बगैर औरतों पर अपना परम्परागत नियंत्रण जरा भी ढीला किए बिना अपनी स्त्रियों को एक खास क्षेत्र में घरों के अन्दर नए आदर्श रूप में ढालने की कोशिश करने लगे। शिक्षित स्त्री की नयी भूमिका की अन्तर्वस्तु काफी हद तक नहीं पुरानी थी।'' (रस्साकशी, पृ0 212) वीरभारत तलवार की उक्त बात से असहमत होना कठिन है परन्तु इस वक्त से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि समकालीन बुद्धिजीवियों को यह बात बिल्कुल साफ हो गयी थी कि स्त्री शिक्षा के बिना देश की उन्नति सम्भव नहीं है। किसी भी देश का भविष्य उस देश की नागरिकों की क्षमता से तय होता है। नागरिक उद्यमी, साहसी और कार्यकुशल हों, इसमें पारिवारिक प्रबंधक का बड़ा हाथ होता है। पारिवारिक देश की उन्नत बनाने की प्रबल भावना ने पितृ-सत्ता के अन्तर्निहित स्वार्थ को छोड़ने के लिए मजबूर करती गयी। स्त्री-शिक्षा का बीज पड़ा फलस्वरूप आज नवीन, शक्तिशाली और आत्मनिर्भर भारत का अभ्युदय हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ

राधा कुमार (2011) -स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
रोहिणी अग्रवाल (2012) -स्त्री लेखन, स्वप्न और संकल्प, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
डॉ0 धर्मवीर (सं0)(2006) -सीमन्तनी उपदेश, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
वीरभारत तलवार (2018) -रस्साकशी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
रामविलास शर्मा (2004) -भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और नवजागरण की समस्यायें, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
नामवर सिंह -हिन्दी नवजागरण की समस्यायें (आलेख), hindisamay.com

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777
भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,17-20**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 10 फरवरी 2022

''मानस रोगों का विनाश है''

डॉ० दिनेश उपाध्याय*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *''मानस रोगों का विनाश है''* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र का लेखक मैं *दिनेश उपाध्याय* घोषणा करता हूँ कि लेखक के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेता हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देता हूँ। मैंने शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देता हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देता हूँ।

शंखेन्द्वाभमनीयसुन्दरतनुं शार्दूचमाम्बरं,/ कालव्यालकरालभूशणधरं गंगाशशांकप्रियम्। काशीशं कलिकल्पशौधशमनं कल्याण-कल्पद्रुमं,/ नौमीऽयं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पह शंकरम्।।2।।[1]

कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्। करूणीकलककलकंचलोचनं नौमि शंकमनंगमोचनम्।।3।।[2]

ब्रह्म की वाणी से देवताओं का भय और स्नेह दोनों ही अभिव्यक्त हो रहा था। यहाँ ब्रह्म के द्वारा की गयी प्रार्थना और उसमें स्नेह का सामंजस्य एक विशेष संकेत देने वाला है। अर्थात् ब्रह्म को समष्टि बुद्धि का प्रतीक माना जाता है। वास्तव में देखा जाय तो स्नेह मन का धर्म है। चाहे व्यक्तिगत जीवन या सामाजिक, किसी भी दिशा में मन, बुद्धि का सम्मिलित सहयोग युक्त सफलता नहीं मिलती। वास्तव में अधिकतर दुःखी लोगों की मनस्थिति का निरीक्षण करें तो उसमें मन व बुद्धि के इस अन्तर्द्वन्द्व का दर्शन होगा। वरन् मन अभ्यास के अनुकूल प्रिय लगने वाली वस्तुओं की ओर जाना चाहता है, लेकिन बुद्धि जिन्हें श्रेष्ठ व वास्तविक समझती हैं, उसे पाने की प्रेरणा देती है। इस आधार पर भगवान की प्राप्ति के लिए तो यह और भी अपेक्षित है कि हमारी बुद्धि, मन, समग्र जीवन एक ही उद्देश्य के लिए सचेष्ट हों।

आन्तरिक विश्वास से प्रेरित होकर जहाँ हमारी मन-बुद्धि एक ही लक्ष्य, प्रभु के अवतरण के लिए सचेष्ट युक्त हैं, वहाँ सफलता अवश्यम्भावी हैं। जैसा कि इस प्रसंग में स्पष्ट है कि, मानव जीवन की अशान्ति के कारण के रूप में गोस्वामी जी ने मानस रोगों का वर्णन किया है। जैसे रोग-ग्रस्त व्यक्ति सारी भोग सामग्रियों के बीच भी अपने को अशान्त अनुभव करता है। उसी तरह मन अस्वस्थ होता है, तब समस्त वैभव और विषय भी व्यक्ति को जो संतुष्ट युक्त नहीं है। इस द्रष्टान्त में गोस्वामी जी ने दुर्गुणों के रोग के रूप में चित्रित किया है जो आयुर्वेद में रोग की उत्पत्ति का सम्बन्ध त्रिदोष ''कफ, वात, पित्त'' से माना जाता है। जो गोस्वामी जी ने उसी पद्धति का मानस-रोग के रूप में चित्रित किया है। मन के त्रिदोष है वे ''काम, क्रोध, और लोभ, का पूर्णरूप से चित्रण गम्भीर व तथ्यपूर्ण युक्त किया है, ''काम, वात, कफ, लोभ अपारा। क्रोध नित्त नित छाती जारा। प्रीति करइ जो तीनिउ भाइ। उपजइ सन्निपात दुखदाई।। अहंकार अति दुखत डमरूआ। दंभ

* सुधाकर सिंह फाउण्डेशन महाविद्यालय (पिलखिनी गौरा) बादशाहपुर, जौनपुर (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

कपट मद मान नहरूआ। तृष्णा उदर बृद्धि अति भारी। त्रिविध ईशण तरूण कुटिलाई।। पर सुख देखि जरनि सोई हई। दुश्ट दुष्टता मन तिजारी। ममता दुई कण्ठ इरशाई। हरश विशाद, गरह बहुताई।। ज्वर जुग विधि मत्सर अविवेका कहं लगि कहौं गुरोग अनेका।''

एक व्याधि बस नर मरहिं, हरष विषाद गर बहुताई। पीड़हिं सन्तन जीव कहं, सो विमि लहई समाधि।।[3]

मानस रोगों के विस्तृत विवेचन के लिए एक स्वतंत्र ग्रन्थ की अपेक्षा है। यहाँ तो गोस्वामी जी ने रोगों के विनाश के लिए जिस चिकित्सा-पद्धति का वर्णन किया है, उसका संक्षेप परिचय देना अभीष्ट है। सर्वप्रथम वे विविध औषधियों का वर्णन किया है, जिसका धर्मशास्त्रों में विस्तृत निरूपण है, ''नेम धर्म आचार जप, जोग जज्ञ व्रत दान। भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं, रोग जाहिं हरिजान''।।[4]

औषधियों के रूप में ही शास्त्रों ने इनका वर्णन किया है, क्योंकि शास्त्रों का लक्ष्य भी मानवीय दुर्गुणों का विनाश ही है। किन्तु क्या ये औषधियाँ रोगों को पूरी तरह विनाश करने में समर्थ हैं? गोस्वामी जी इसका नकारात्मक उत्तर देते हुए विचारात्मक स्थिति के अन्तर्गत कहते है कि-''नहिं रोग जाहिं हरिजान'' वरन् ये तथ्य युक्तसंगत जान पड़ता है। वस्तुतः कारण के आधार पर दो बातें सामने आती हैं। अर्थात् शारीरिक रोगों से भिन्न और उलझी हुई समस्या का सामना मानस रोग में करना पड़ता है, जो शारीरिक रोगों में अनेक रोगों का आक्रमण एक साथ देखा जाता है। सच तो यह है कि ये वर्णित रोग मानव के मन में पाये जाते हैं। इस आधार पर गोस्वामी जी कहते है कि रोग होने न होने का पता लगाना ही कोई प्रश्न नहीं होता वह तो सुनिश्चित रूप से ही है। यह अवसर की बात है कि किस समय कौन सा रोग हो सकता है। उनका मानना है कि, ''मानस रोग कछुक मैं गाये। हैं सबके लखि विरलन पाये। विषय कुपथ्य पाय अंकुरे। मुनिहु हृदय का नर बापुरे। जाने ते छीजहिं कुछ पापी। नाश न पावहिं जन परितापी।।''

औषधि की जटिल समस्या यह है कि अनेक रोगों का एक साथ आक्रमण होने से जो औषधि एक रोग को नष्ट करती हैं, वहीं दूसरे रोग को बढ़ाने वाली है। उदाहरण के लिए 'दान' शब्द को ही ले लें। अर्थात् 'दान' एक औषधि है, जिसकी महिमा का वर्णन शास्त्रों व पुराणों में भी स्पष्ट है। वरन् कहा जाता है कि प्रजापति ब्रह्म में देव, दैत्य और मनुष्यों द्वारा आदेश माँगे जाने पर उन्हें 'द' 'द' का उपदेश दिया था। दैत्य में हिंसा वृत्ति प्रखर होने से 'द' से 'दया' तथा देवताओं भोग परायण है, वरन् उनके लिए 'द' में इन्द्रिय दमन से है, और मनुष्य पर लोभी प्रवृत्ति पर अंकुश हेतु 'द' का अर्थ 'दान' का उपदेश व आदेश से है।

यह दृष्टान्त दान की महत्ता का सूचक के साथ ''उद्देश्य व लोभ के विनाश'' से है। स्वाभावित है कि बिना लोभ के परित्याग के दान देना असम्भव है। हम कह सकते है कि मानस-रोग के विनाश की दृष्टि से कह सकते हैं कि दान, कफ वृद्धि का नाशक है। जिस प्रकार कफ की बुद्धि किसी समय आक्रमण करके रोगी को बेचैन कर देता है, उसी प्रकार लोभ से आशक्त व्यक्ति को दिन-रात चैन कहाँ है। वरन् दान देने से लोभ-वृत्ति का शमन हो सकता है, परन्तु अहंकार बढ़ जाता है। वस्तुतः शास्त्रीय औषधियाँ एक-एक रोग का उपसमन करके दूसरे बढ़ाने का कारण बन जाते है। लेकिन पुनः प्रश्न उठता है कि क्या ये औशधियाँ एक रोग का भी पूर्ण रूप से विनाश कर सकती है, एवं क्या दान के द्वारा लोभ समाप्त हो जाता है? अर्थात् जिस समय दान दिया जाता है उस समय अवश्य लोभ-वृत्ति दब जाती हैं, किन्तु दान हेतु धन चाहिए, अर्थात् पुनः लोभ बढ़ जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि औषधियाँ अणिक शान्ति को छोड़कर और कुछ देने में असमर्थ हैं। वरन् ऐसी औषधि जो सभी रोगों का समाधान हो, वह औषधि ''मानस की दृष्टि में वह औषधि है, ''भगवद्-भक्ति''। किन्तु औषधि का अनुपात, सेवनविधि और पथ्य की व्यवस्था तो आचार्य ही बता सकता है। सद्गुरू जो त्रिभुवन गुरू शिव का ही प्रतिनिधित्व करता है। अभिप्राय है कि यदि हम सद्गुरू में 'विश्वास' स्थापित नहीं कर पाये, तो गुरू में शिव भावना नहीं बन पायेगी, तब औषधि से भी दूर हो जायेगें। चाहे हम ''शंकर भगति बिना नर भगति न पावइ मोरि''। कहे अथवा ''बिनु विश्वास भगति नहिं तेहि, बिनु द्रवहिं न राम'' के रूप में स्वीकार करें। अर्थात् जहाँ शिव वहीं शक्ति भी अवश्यम्भावी है, अतः विश्वास से युक्त ''श्रद्धा'' का होना आवश्यक है। वरन् मानस रोग के प्रसंग में 'श्रद्धाय' को 'अनुपान' का रूप दिया गया है, जिसके अभाव में औषधि रूपी शक्ति का उदय असम्भव है, गोस्वामी जी कहते है कि, ''सद्गुरू वैध बन विश्वासा। संजम यह न विषय की आशा,/ रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनुपान श्रद्धर मति पूरी।

ऐंहि विधि भलेहिं सो रोग नसाई। नाहिंत जतन कोटि नहिं जाई।।''[5]

अर्थात् भक्ति की चिकित्सा-पद्धति बड़ी स्पष्ट हैं। वहाँ लक्षणों की चिकित्सा नहीं की जाती। वरन् मन रोगी क्यों है? साधारणतया शारीरिक रोगों में जैसा देखा जाता है कि सभी रोग व्यक्ति की भूलों के ही परिणाम होते है, वहीं स्थिति मानस रोगों की है। अपितु सत्य यह है कि मानसिक रोग पहले उत्पन्न होते हैं और उन्हीं की प्रतिक्रिया से शरीर भी ''रूग्ण'' हो जाता है। परन्तु दूसरी ओर मन की स्थिति और भी निराली है। इच्छित विषय की तीव्र कामना उत्पन्न होते ही 'काम, वात' का उदय होता है, और उसका परिणाम दो रूपों में परिलक्षित होता है। अर्थात् इच्छापूर्ण होने पर लोभ रूप में 'कफ' तथा इच्छा-पूर्ति के अभाव में ''क्रोध'' युक्त 'पित्त' की प्रबलता। इस प्रकार त्रिदोष का क्रम सम्पन्न हो जाता है। फिर यहीं मानसिक क्रोध व लोभ के भाव अन्य विकारों के रूप में प्रकट होते है। अर्थात् दम्भ, कपट, मान, मद, अहंकार, तृष्णा ये सब लोभ के रोग है। अतः कामना, पर प्रहार कर उसे नष्ट किया जा सकें तब इसकी वंश-वृद्धि समाप्त हो जाती है। वस्तुतः वहीं रोगी बुद्धिमान है जो योग्य चिकित्सक का चुनाव करने के बाद स्वयं को पूरी तरह उसकी इच्छा पर छोड़ देता है। ''विश्वास में निष्कामता और समर्पण होता है। अर्थात् मानस में दो घटनाएँ प्रतिकूल रूप में इसी तथ्य की पुष्टि करती है। दो नकली महात्माओं का चित्र मानस में आता है, जो ठगने की चेष्ट करते हैं। एक प्रयास में सफल तथा दूसरा असफल होता है, एक है कपट मुनि जो भानु प्रताप को ठग लेता है। दूसरा काल नेमि, जो हनुमान जी को धोखा देने में असफल होता है। भानुप्रताप क्यों ठगा गया? विश्वास के कारण नहीं बल्कि अपने छलपूर्वक व्यवहार के कारण। अपने हृदय में कितनी बड़ी आकांक्षाओं को संजोए हुए था, जिसका पता कपट मुनि के समक्ष ही लगता है। अतः क्यों न निष्काम की उपाधि प्राप्त की जाय? पर कपट मुनि के आश्वासन देते ही वह खुद पढ़ता है।

मरन दुःखरहित तन, समर जितै जनि कोम। एक क्षत्र रिपुहीन महि, राज कलप शत होय।।

दूसरी तरफ विश्वास अर्थात् हनुमान जी को कालनेमि ठगने की चेष्टा करता है। हनुमान जी विश्वासावतार है, क्योंकि वे शिव के अवतार माने जाते है। एक ओर कपट व दूसरी ओर विश्वास। यहाँ पर कपट पराजित होता है, क्योंकि विश्वास निष्काम था, लेकिन कालनेमि स्वयं ज्ञान दृष्टि की प्रशंसा करता था व हनुमान जी को प्रलोभन भी देता है कि मुझसे दीक्षा -ग्रहण करने पर ज्ञान-दृष्टि प्राप्त हो जायेगी। ''सर मज्जन करि आतुर आवहु। दीक्षा देहुं ज्ञान जेहि पावहु''[6]

हनुमान जी के हृदय को आकांक्षा नहीं है। वे जल पीने के लिए सरोवर में प्रविष्ट होते है। जल में शापित मकरी के रूप में जो 'मति' की प्रतीक है, जो अपनी प्रगल्भता और धृष्टता के कारण मकरी थी। जीवन की आशा से जाने वालों को वह नीचे ले जाकर मृत्यु का ग्रास बना देती है। वस्तुतः उसके उद्धार का मार्ग है 'विश्वास' का पद ग्रहण हनुमान जी प्रहार करके उसे श्रापमुक्त कर देते है। तब वहीं 'मति' विश्वास की सेविका बनकर वास्तविकता के प्रति सचेत करती है, 'सर पैठत कपि पद गहा, मकरी अति अकुलानि।'' मारी सो धरि दिव्य तनुः चली गगन चढ़ि जान।[7] मुनि न होई यह निसिचर घोरा। मानहु सत्य वचन कपि मोरा।।''[8]

हनुमान जी, कालनेमि का स्वरूप जानकर उसे विनाश करने में सफलता प्राप्त करते हैं। इस प्रकार वास्तविक विश्वास कभी नहीं ठगा जा सकता हैं। भक्ति का स्वरूप व्यापक है, उसमें विभिन्न प्रकार के मनोवृत्ति वाले व्यक्तियों के लिए साधन के पृथक-पृथक स्वरूप निर्धारित हैं।

मानस विकृति में भी प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में किसी एक रोग का प्राधान्य रहता है। किसके लिए भक्ति को किस रूप में प्रारम्भ श्रेयकर होगा, इसका स्वयं निर्णय करना असम्भव कार्य है। इसे तो कोई अनुभवी तत्वज्ञ ही बता सकता है। साधक को भी हृदय में पूर्ण विश्वास लाने की चेष्ट करनी चाहिए। ''श्रद्धा-युक्त अन्तःकरण से जब आचार्य के बताये हुए मार्ग से साधक साधना करता है, तब क्रमिक रूप से जीवन के दुर्गुणों का नाश होकर शानित का संचार होता है।'' ब्राह्म निर्माण के भौतिक प्रयत्नों के साथ-साथ आन्तरिक जीवन के निर्माण के लिए भी पूर्ण प्रयत्न की आवश्यकता है। अनेक प्राचीन मनीषियों ने इस दिशा में शोध कर जो दिव्य रत्न दिये है, वह समाज को उनका सदुपयोग करना नितान्त आवश्यक है। विशेष रूप से मानस में तो मनुष्य-जाति की समस्त समस्याओं का समाधान कर देने की चेष्टा की गयी है, पर आवश्यकता है, उसके वास्तविक स्वरूप के विकास की। यथा साध्य इस दिशा में यह एक मेरा प्रयास (लघु) अर्थात् तिनका की भाँति है।

स्रोत

[1]*लंका काण्ड : रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर
[2]*उत्तर काण्ड : रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर
[3]*उत्तर काण्ड (121(क)): रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर
[4]*वही,* 121(ख), गीता प्रेस, गोरखपुर
[5]*उत्तर काण्ड : रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर
[6]*लंका काण्ड : रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर
[7]*लंका काण्ड (57-दो) : रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर
[8]*लंका काण्ड (58-चौ0) : रामचरितमानस* -स्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777
भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,21-23**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 31 मार्च 2022

''अस्ति'' प्रणयन गीत के भाव और यथार्थ

डॉ० अंशुमाला मिश्रा*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *''अस्ति'' प्रणयन गीत के भाव और यथार्थ* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखिका मैं *अंशुमाला मिश्रा* घोषणा करती हूँ कि लेखिका के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेती हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देती हूँ। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इस छपने के लिये भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देती हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देती हूँ।

आधुनिक युग की कवयित्री अनुराधा पाण्डेय की कविता संग्रह अस्ति में उनके प्रेमिल मनोभावों का परिपाक एक अद्‌भुत रूप में देखने को मिलता है। उनकी पहली कविता जिसमें उन्होंने कविता को अपनी पुत्री के रूप में स्वीकार किया है :

सच कहें तुझको सखे! तो/ आत्मजा कविता हमारी।

वो कहती हैं कि उनके अकेलेपन की संगिनी है, उनके रूठने पर उन्हें मनाती है :

काट कर निज प्राण वो निज/ काव्य तरू में प्राण भरती। सीच कर अपने रूधिर से,/ प्राणमय हर पर्ण करती। रात जगकर अनगिनत वो,/ संग में हर क्षण गुजारी। आत्मजा कविता हमारी।[1]

जब कभी हम रूठ जाते,/ वो विकल मनुहार करती। चूम कर नित भाल कहती.../ मातु हम उसकी दुलारी। आत्मजा कविता हमारी।

अनुराधा जी इस कविता के माध्यम से कहती हैं कि यह कविता उनके चिर परिचित कष्टों को हँसकर उनसे बाँट लेती है, उनकी चिर व्यथा का बोझ उठाती है :

नित्य अपनी व्यंजना में/ पीर को हम घोल देते। हर्ष को व्यामोह कहकर,/ वेदना पर खोल देते। काव्यिके हित हम उठाते.../ चिर व्यथा का बोझ भारी। आत्मजा कविता हमारी।

अपनी दूसरी कविता में वो कहती हैं कि जब वो अकेली और एकांत में होती हैं तो अपने प्रिय पर गीत लिखती हैं और वो जानना चाहती हैं कि क्या उनके लिखे गीत उनके प्रिय गुनगुनाते हैं या नहीं :

बस मुझे इतना बताना,/ गीत जो तुम पर लिखे प्रिय!/ क्या अभी भी गुनगुनाती??

पास जब कोई तुम्हारे,/ छंद सुनने हित न होता। भाव जब एकांत मन का,/ कोटि विधि से भी न सोता। तब कहो! वे अर्गलाएँ-/ नेह की किसको सुनाती?[2]

गीत जो तुम पर लिखे प्रिय!/ क्या अभी भी गुनगुनाती?

री प्रिये! तुमसे विलग हो,/ काट ही डाला हृदय को। मूल जो इस प्राण का था,/ छोड़ आया उस निलय को। क्या तूम्हें उस धुर प्रलय

* एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जगत तारन महिला महाविद्यालय (सम्बद्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय) प्रयागराज (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

की-/ आज तक भी याद आती?

ये सभी गीत और उनकी पंक्तियाँ एकाकीपन में कष्ट सहने वाले प्रेमी प्रेमिका के विरह का वर्णन करते हैं :

गीत जो तुम पर लिख प्रिये!/ क्या अभी भी गुनगुनाती?

क्या तुम्हें है याद अब तक,/ शांत नद का वो किनारा। देखते थे बैठ जिस पर,/ नित्य सपनों का सितारा। क्या तूम्हें उद्दाम लहरें-/ आज भी तट तक बुलाती?

गीत जो तुम पर लिख प्रिये!/ क्या अभी भी गुनगुनाती?[3]

अनुराधा जी ने बहुत से काव्य लिखे हैं। आपकी रचनाएँ कविता कोष में भी स्थान पाती हैं। आप अनेक शैलियों में लेखन कार्य करती हैं। आपकी लिखी 'अस्ति' उनका नौवाँ काव्य संग्रह है। आगे आप अस्ति की तीसरी कविता में लिखती हैं :

मैं तुम्हारे नेह में आबद्ध होकर/ वक्ष पर धर सीस मरना चाहती हूँ...[4]

व्यग्र मेरे प्राण व्याकुल है सुनो प्रिय!/ ले वलय में बाह के अभिसार कर लो। प्रीत के आगे अथक असहाय हूँ मैं/ साँ के इस तल्प पर अधिकार कर लो। नेह का सागर अगम उद्दात उच्छल/ तैर कर सर में उतरना चाहती हूँ.....

आप की रचनाओं में हर जगह यही दिखाई देता है कि प्रिय से दूर रहना कितना कष्टप्रद होता है :

मैं तुम्हारे नेह में आबद्ध होकर,/ वक्ष पर धर शीश....

चुम्बनों के चिन्ह उर हिलकोरते हैं,/ पर अधर उल्लास मानो श्लथ पड़ें हैं। नींद की निस्तब्धता में डूबने को/ चक्षु-मानो वेदना से हत पड़ें हैं। कल्पनाएँ वर्तिका बन जल रही हैं। राख बन प्रिय! साथ झड़ना चाहती हूँ.../ मैं तुम्हारे नेह में आबद्ध हो कर/ वक्ष पर धर सीस मरना चाहती हूँ...

आगे आप लिखती हैं कि वो अपलक जगकर प्रीत का प्रतिमान गढ़ देना चाहती हैं :

जाग अपलक चिर निशा मैं साथ प्रियतम!/ जी करे है प्रीत का प्रतिमान गढ लूँ। नैन में जो राग अंकित कर गये तुम,/ बस उसे अनुवाद कर भगवान गढ़ लूँ। मैं तुम्हारे पंथ में बन पुष्प प्रेमिल-/ अर्चना बनकर बिखरना चाहती हूँ।

अपनी चौथी कविता में आप प्रेम को सनातन मानती हैं पर मूक होकर आखिर कितने दिन प्रेम किया जा सकता है :

प्रिय! सच यह प्रेम सनातन है/ पर मूक प्रणय कितने दिन तक?[5]

है देह मिली क्षण भर माना,/ लेकिन इसको गाना सस्वर। क्यों शोक करे प्रिय! मृत्यु पूर्व/ कह-कह करके यह है नश्वर?/ होना निश्चित यह देह क्षार,/ पर दग्ध हृदय कितने दिन तक?/ पर मूक प्रणय कितने दिन तक?

उनका मानना है कि मन के साथ तन को प्रेम की आवश्यकता होती है उसे भी प्रेमिल संवाद चाहिए :

अब! भला कल्पना के रज से,/ क्यों करते हो निर्माण प्रिये!/ कैसे सरिता के तट बैठे,/ होगा तन-मन लयमान प्रिये!/ कहना! यह द्वय उर का कल्पित-/ प्रिय शुष्क विलय कितने दिन तक। पर मूक प्रणय कितने दिन तक।

'अस्ति' के 5वें गीत जिसका शीर्षक प्रणयन गीत है, यह बहुत ही सुन्दर भावों की मणि पिरोता है। इसमें कवियत्रि कहती हैं कि प्रेम का हर क्षण हमारा होना चाहिए :

आ तुम्हारी चितवनों की छाँव में सपने सजाएँ। व्योम के विस्तार-सा हो, प्रेम का हर क्षण हमारा।[6]

स्याह नयनों में तुम्हारे झाँककर खुद को रिझाएँ। मोक्ष पाएँ प्रेम पथ में, हर परस पर वारि जाएँ। प्रिय! ठहर जाओ तनिक तो, देख लो उर व्रण हमारा। व्योम के विस्तार सा...

अपने प्रणयन गीत में वो कहती हैं कि मेरे करोड़ों जन्म की संचित साधना का फल भी तुम ही हो :

कोटि जन्मों की सुसंचित, साधना का प्रतिफलन तुम। साधते जिसको रहे हम, हो वही जीवन मरण तुम। नैन भर कर देख लो यदि, हो शुचित जीवन हमारा। व्योम के विस्तार-सा

क्या बताएँ देख लो खुद, मात्र तुमको जी रहे हैं। नाम लेकर इक तुम्हारा, घाव हृद का सी रहे हैं। देवता तुमको बनाने का रहा बस प्रण हमारा। व्योम के विस्तार -सा हो प्रेम का हर क्षण हमारा।

प्रस्तुत काव्य संग्रह 'अस्ति' में बहुत सी कविताएँ हैं जिसमें कुछ के शीर्षक हैं और कुछ के नहीं। कवयित्री मझी हुई रचनाकार हैं। अच्छे छंदों में निबद्ध रचनाएँ करती हैं प्रेम का परिपाक पकाती हैं और सहृदयों के आगे परोस कर रख देती हैं। आपकी रचना निःसंदेह अच्छी है जिसमें कहीं सिर्फ भाव प्रवणता है और कहीं तथ्य का समावेश है। प्रस्तुत शोध पत्र में शुरूआती 10 पृष्ठ तक की कवितायें ली गयी हैं।

संदर्भ

[1]*अस्ति : प्रणयन गीत* -अनुराधा पाण्डेय, पृष्ठ संख्या 1
[2]वही, पृष्ठ संख्या 3
[3]वही, पृष्ठ संख्या 4
[4]*अस्ति : प्रणयन गीत* -अनुराधा पाण्डेय, पृष्ठ संख्या 5
[5]वही, पृष्ठ संख्या 7
[6]वही, पृष्ठ संख्या 9

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777

भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,24-27**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 30 मार्च 2022

अथ द्वितीया ः अधिकार सूत्र का सन्निवेश

डॉ० सपना भारती*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *अथ द्वितीया ः अधिकार सूत्र का सन्निवेश* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखिका मैं *सपना भारती* घोषणा करती हूँ कि लेखिका के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेती हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देती हूँ। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इस छपने के लिये भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देती हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देती हूँ।

भेदों के साथ कारक पदार्थ को बताने की दृष्टि से अधिकार सूत्र का सन्निवेश किया जा रहा है-[1] कारके[2] यह अधिकार सूत्र है। इसका अधिकार तत्प्रयोजको हेतुश्च[3] तक जाता है[4]। इसमें अपादान, सम्प्रदान, करण, अभिकरण, कर्म तथा कर्ता संज्ञायें हैं। अपादानादि छवों के साथ कारक अन्वित होता है। इसलिए इन्हें अपादान कारक, सम्प्रदान कारक आदि कहते हैं। अधिकार सूत्र की यह विशेषता है कि उसका पूर्ण अर्थ विधि शास्त्र के साथ अन्वित होने पर उपस्थित होता है। कुछ लोगों का कहना है कि स्वदेशे वाक्यार्थबोधशून्यत्वे सति परदेशे वाक्यार्थबोधकत्वम् अधिकारत्वम् अपने स्थान पर वाक्यार्थबोध न होने पर अन्य सूत्रों के स्थलों पर वाक्यार्थबोध कराने वाले सूत्र को अधिकार कहते हैं। पर यह कहना ठीक नहीं है।[5]

इसके अनुसार वाक्यार्थबोधशून्यत्वे सति तथा सूत्र दोनों कथन वदतो व्याघात है। इसलिए अधिकार का वैशिष्टयपूर्ण अर्थ विधिशास्त्र के साथ अन्वित होने पर उपस्थित होता है यह कहना समीचीन है। अर्थात् 'स्वदेशे लक्ष्यसंस्कारकवाक्यार्थ-बोधशून्यत्वे सति विधि सूत्र कवाक्यतापन्नेत्वेऽर्थबोधकत्वम् अधिकारत्वम् मानना चाहिए। विषयभेद से अधिकार 6 प्रकार का होता है।[6] कारके सूत्र किस प्रकार का अधिकार शास्त्र है, यह विचारणीय विषय है। काशिकाकार ने इसे विशेषण अधिकार माना है।[7] यदि यह संज्ञा अधिकार होता तो कारके के स्थान पर कारकम् लिखा होता, पर यहां सप्तमी है जो निर्धारण मे है। अर्थात् कारको में अपादान आदि कहलाते हैं ऐसा अर्थ करना होगा। ऐसी स्थिति में यद्यपि कारकेषु लिखना चाहिए था फिर भी सौत्रत्वात् छन्दोवत्सूत्राणि भवन्ति अथवा जाति में एकवचन मानकर समाधान हो जाता है। इसलिए यह विशेषण अधिकार है। इसकी अन्विति अपादानादि के साथ होगी। परन्तु इसे विशेषण अधिकार सूत्र मानने पर यह दोष उपस्थित हो स कता है कि तब कारक शब्द से केवल अपादान आदि का ही बोध नहीं होगा तथा कारका-दृत्तश्रुतयोराशिषि[8] आदि में अपादानादिरहित में भी अन्तोदात्तप्रवृत्ति होने लगेगी। क्योंकि विशेषण पक्ष में संज्ञा के द्वारा कारक कानियमन तो हो नहीं सकता हे। साथ ही अष्टाध्यायी के प्रथम अध्याय के चतुर्थ चरण में संज्ञा सूत्रों का समावेश

* प्रभारी प्राचार्य, एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, दमयन्ती आनन्द राज राजकीय महाविद्यालय (बिसौली) बदायूँ (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

किया गया है, इसलिए इसे संज्ञा अधिकार मानना अधिक संगत है। इस दृष्टि से भट्टोजि दीक्षित आदि ने कारके की सप्तमी को सौत्र प्रयोग मानकर प्रथमा में उसका विपरिणाम करके कारकम् इस संज्ञा पद का अधिकार माना है। इस सिद्धान्त में भाष्यकार का इह हि व्याकरणे ये वा एते लोके प्रतीतपदार्थकाः शब्दास्तैर्निर्देशः क्रियन्ते, या वा एताः कृत्रिमाष्टिधुभादि संज्ञाः। न चायं लोके ध्रुवादीनां प्रतीतपदार्थकः शब्दः, न खल्वपि कृत्रिमा संज्ञा, अन्यत्राविधानात्। संज्ञाधिकारश्चायम्। तत्र किमन्यच्छवयं विज्ञातुमन्यदतः संज्ञायाः[9] वचन प्रमाण है। कारकम् की अनुवृत्ति होने पर ध्रुवमपायेऽपादानम्[10] सूत्र में वाक्यभेद करके पहले अपाये ध्रुवं कारकसंज्ञं स्यात् अर्थ होगा। पश्चात् उक्तं कारकम् अपादानसंज्ञं अर्थ होगा[11]। इस पक्ष में भी एक दोष सम्भावित है कि आकडारादेका संज्ञा[12] के अनुसार दो संज्ञायें साथ साथ कैसे होंगी। पर यहां ध्यातव्य है कि इन दोनों संज्ञाओं में परस्पर विरोध नहीं है। इनका समावेश साथ-साथ होता है।

वस्तुतः सिद्धान्त पक्ष में तो भाष्यकार ने कारके का अर्थ क्रियायाम् माना है। द्र0- यावद् ब्रूयात् क्रियायामिति तावत्कार के इति[13]। क्रियायाम् की अनुवृत्ति होने पर क्रिययायां विषये यद्ध्रुवं तदपादानसंज्ञं स्यात् यह अर्थ होगा।[14] कारक यह अन्वर्थ संज्ञा प्राचीन आचार्यें की है। आचार्य पाणिनि ने इसे अविकल उद्धृत कर दिया है तथा इसकी परिभाषा उन्होंने नहीं दी है, कयोंकि यह उनकी शैली है। प्रायः किसी भी महती संज्ञा की परिभाषा उन्होंने नहीं दी है। करोतीति कारकम् अर्थात् करोति कर्तुकर्मव्यपदेशान् इति इस व्युत्पत्ति के अनुसार क्रिया को ही कारक कहते हैं। क्योंकि वही कर्ता कर्म आदि व्यपदेशों को करती है। यदि क्रिया न हो तो कर्ता, कर्म आदि नाम बन ही नहीं सकते हैं। करोति कर्तु कर्मादिव्यपदेशानिति व्युत्पत्त्या कारकशब्दः क्रियापरः। तेन क्रियायामित्यर्थः। तदुक्तं भाष्ये यावद्-ब्रूयात्क्रियामिति तावत्कार के इति-इति। क्रियायां यद्विपयस्तत कर्मादिसंज्ञमित्यर्थः। विषयत्वं च जनकत्वेनेति बोध्यम्।[15] कारके सूत्र के भाष्य में करोतीति कारकम् यह व्युत्पत्ति दी गयी है। कारक इस महती संज्ञा का प्रयोजन अन्वर्थ संज्ञा का विज्ञापन माना गया है। यहां अन्वर्थ मानने पर अन्वर्थमिति चेदकर्तरि कर्तृशब्दानुपपत्तिः वार्तिक से आक्षेप करके समाधान भी किया गया है। इससे सिद्ध होता है कि करोति का अर्थ निर्वर्तयति है। किं निर्वर्तयति इस प्रश्न का उत्तर प्रसङ्ग से क्रियाम् होगा। अर्थात् करोति क्रियां निर्वर्तयति इति कारकम् यह अर्थ निकलेगा। इससे सिद्ध होता है कि क्रिया-जनकत्वं कारकत्वं कारकत्वमक्रिया का जनक कारक कहलाता है।[16]

कियाजनकत्वम् कारकत्वम् मानने पर भी यह शङ्का होती है कि क्रिया का जनक तो वस्तुतः कर्ता होता है। कृ धातु से ण्वुल् प्रत्यय करके कारक नता है, इससे भी कर्ता का बोध होता है, कर्म आदि तो कारक हो नहीं सकते हैं? इसका उत्तर है कि देवदत्तः पचति में पचु-पकाना-क्रिया है। निष्पन्न पाक को देखकर तथा पाक में होने वाले व्यापार को दोकर ही इस क्रिया का पता चलता है। क्रिया कोई पिण्डीभूत वस्तु नही है, जिसे हाथ पकड़कर बताया जा सके। जिसके करने से चावल का पाक हो जाता है, वह ही पाक क्रिया है, जो अनुमान से जानी जाती है। धातु इस क्रिया को ही बताते हैं। धातुओं का परिगणन आचार्य पाणिनि ने कर दिया है। इस प्रकार पच् धातु के दो अर्थ होते हैं। 1. फल 2. व्यापार। फल और व्यापार बिना किसी आश्रय के प्रकट नहीं होते हैं। फल का जो आश्रय होता है उसे ही कर्म तथा व्यापार का जो आश्रय होता है उसे कर्ता कहा जाता है। इस प्रकार क्रिया की जनकता कर्ता तथा कर्म दोनों में होती है। यहा यह भी ध्यान देने की बात है कि पच् पाकक्रिया में होने वाला व्यापार घ्भी कई अवान्तर व्यापारों का समूह होता है। मुख्य व्यापार का आश्रय कर्ता होता है तथा वह क्रिया का जनक कहलाता है। साथ ही क्रिया की जनकता में अनेकों की सहायता अपेक्षित होती है।

उन अनेकों को भी क्रिया का जनक ही माना जाता है। उन अनेकों में क्रिया की जनकता अवानतर व्यापारों के कारण होती है। कर्ता स्वव्यापार में स्वतन्त्र होता है जब कि अन्य अनेक, कर्ता के अधीन होते हुए भी, अपने अपने क्षेत्र में क्रिया के जनक होते हैं। जैसे- देवदत्तः विष्णुमित्रस्य पुत्राय भोजनं प्रतिश्रुत्य धान्येभ्यः तुण्डुलान् निष्काष्य स्थाल्याम् अग्निना पचति इस वाक्य में देवदत्तकर्ता में स्थाली का चूल्हे पर अधिश्रयण, उसमें उदकासेचन, तण्डुलावपन तथा एधोपकर्षण आदि मुख्य व्यापार होने के कारण वह क्रिया का जनक है, उसी प्रकार पाक रूप फल का आश्रय होने के कारण तण्डुल कर्म, ज्वलनरूप वयापार का आश्रय एवं पाक क्रिया में मुख्य सहायक अग्नि करण, प्रेरणा अनुमति रूप व्यापार का आश्रय एवं कर्ता के द्वारा अभिप्रेत पुत्र सम्प्रदान, अवधिभावोपगमन रूप व्यापार एवं तण्डुलापाय में

ध्रुव धान्य अपादान तथा तण्डुलधारणरूप व्यापार एवं तण्डुलों का आधार स्थाली अधिकरण भी क्रिया के जनक हैं। क्रिया की जनकता इनमें भी है, इसलिए ये सभी कारक कहलाते हैं। विष्णुमित्र किसी भी प्रकार क्रिया का जनक नहीं है, इसलिए उसे कारक नहीं कहा जा सकता है। कारक 6 ही है। कारके सूत्र स्वरित किया गया था। अतः अधिकार सूत्र कहलाता है तथा इसके अधिकार में 6 ही आते हैं, जो कारक कहलाते हैं, इसमें सम्बन्ध नहीं आता है। अतः वह कारक नहीं हो सकता है। इसीलिए क्रियान्वयित्वं कारकत्वम् मानने वालों का सिद्धान्त उचित नहीं प्रतीत होता है। क्योंकि क्रियान्वयी कारक है, ऐसा मानने पर परम्परया विष्णुमित्र भी कारक हो जाता। वस्तुतः यहां असंगति भी है। कारक-प्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्त शेष कहलाता है तथा उसमें षष्ठी होती है। कारक को ही साधन भी कहते है।[17]

क्रिया जनकता होने के कारण कर्ता आदि 6 वों की कारक संा होती है। पुनश्च कर्ता, कर्म आदि को अपनी-अपनी भिन्न अवस्था होती है, जिसके कारण उनका नाम कर्ता कर्म आदि होता है। इसे तत्तत्प्रकरण में दिखाा जायेगा। यहां यह भी ध्यातव्य है कि व्याकरण शास्त्र में शाब्दी व्यवस्था मान्य होती है। इसलिए वक्ता जैसी इच्छा करता है वैसा प्रयोग करता है। विवक्षातः कारकाणि भवन्ति-कारक वक्ता की इच्छा के अधीन होते हैं। स्थाल्यां पचति, सथाल्या पचति आदि इसके उदाहरण हैं। वक्ता स्थाली को जिस रूप में उपस्थित करना चाहता है, वैसा कारक[18] प्रयुक्त होता है।[19]

संदर्भ

[1]534 कारके (1.4.23) 'कारके' इत्यधिकृत्य। इसको अधिकृत करके (संज्ञायें कही जायेंगी)।

[2](1.4.23), अष्टाध्यायी

[3](1.4.55), अष्टाध्यायी1

[4]अर्थात् 1.4.24 से 1.4.55 तक होने वाली संज्ञायें कारक कहलाती हैं।

[5]क्योंकि- 'अल्पाक्षरम संदिग्धंसारवद् विश्वतो मुखम् अस्तोभमनवधं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः'

[6]1. संज्ञा, 2. विशेषण, 3. स्थानी, 4. प्रकृति, 5. लिमित्त, 6. आदेश। इनके क्रमशः 1. प्रत्ययः (3.1.1) 2. शेषे (4.2.92) 3. एक पूर्वपरयोः (6.1.84) 4. ङ्याप्प्रातिपदिकात् (4.1.1) 5. धातोः (3.1.91) 6. आर्द्धधातु के (2.4.36) उदाहरण है।

[7]द्र0- कारके इति विशेषण मपादानादिसंज्ञाविषयमधिक्रियते (का0 पृ0 530)। कारक भी स्पष्ट है।

[8](6.2.148)

[9](म0 भा0 पृ0 240)

[10](1.4.24)

[11]द्र0 श0 कौ0 1.4.23।

[12](1.4.1)

[13](म0 भा0 1.4.23)

[14]द्र0- क्रियात्र कारकशब्देनोच्यते। सा हि कर्वादीनि विशिष्टवयपदेशयुक्तान् करोति। विषयत्वेन चायमधिकारः क्रियायां विषये यद् ध्रुवमित्यादि वस्तु सम्पद्यते (प्रदीप-प्रकृत स्थल)।

[15](बृ0 श0 शे0 पृ0 798)

[16]द्र0- साध्यतवेन क्रियैव शब्दात्प्रीयते इति क्रियायाः निर्वर्तकस्य कारकसंज्ञाऽपादानादिसंज्ञा च प्रवर्तते (प्रदीप पृ0 II 242)।

[17]उपर्युक्त निष्कर्ष की पुष्टि में व्याकरण शास्त्र के कुछ वचन नीचे दिये जा रहे हैं ः

क. कारकत्वम् क्रियाजनकत्वम् –भाष्ये करोति क्रियां निर्वर्तयतीति व्युत्पत्ति दर्शनात् (ल0 श0 शे0 पृ0 627)

ख. यद्यपि कर्तरि ण्वुल्विधानात्कारकत्वं कर्तृपर्यायः। एवञ्च कर्मत्वादिविवक्षायां कर्तृत्वाभावात् कारकं कर्मेति विरुद्धं, तथापि संज्ञाविधानसामर्थ्यात् कारकपदं स्वातन्त्र्यमात्रलक्षणकम् (बृ0 श0 शे0 799)।

ग. क्रियावचनो धातुः (म0 भा0 II पृ0 114)।

घ. क्रिया नामेयमत्यन्तापरदृष्टाऽशक्या पिण्डीभूता निदर्शयितुम् । यथा गर्भो निर्लुङ्गितः। सासावनुमानगम्या (म0 भा0 II पृ0 115)।

ङ. भूवादयो धातवः (पा0 1.3.1)

च. फलवयापारयोर्धातुः (वै0 सि0 का0 1)

छ. फलाश्रयः कर्म, व्यापाराश्रयः कर्ता (वै0 भू0 सा0 2 का)

ज. गुणभूतैरवयवैः समूहः क्रमजन्मनां/ बुद्धया प्रकल्पिताभेदः क्रियेति व्यपदिश्यते (वा0 प0 3.8.4)

झ. सर्वेषां कारकाणां साध्यत्वेन साधारणी क्रिया, ततश्च तस्यां सर्वेषां कर्त्तृत्वम् । अवान्तर-व्यापारविवक्षायां तु करणादिह्वपम्। यथा मातापित्रोरपत्योत्पादने कर्तृत्वं भेदविवक्षायां त्वयमस्यामियमस्माज्जनयतीत्यधिकरणत्वमपादानत्वं च व्यवतिष्ठते। कर्तृसंज्ञा तु करणत्वाद्यवस्थायां न भवति। स्वतन्त्रः कर्त्तेत्यत्र कारकत्वादेव स्वातन्त्र्येलब्धे पुनः स्वतन्त्रधुतिर्नियमार्था, तेन स्वतः स्वातन्त्र्यमेव यस्य कर्तृसंज्ञा तस्य, न तु पारतन्त्र्यसहितस्वातन्त्र्ययुक्तस्य (प्रदीप पृ0 246)

ञ. अपादानस्यावधिभावोपगमनं व्यापारः, सम्प्रदानस्य तु प्रेरणानुमित्यनिराकरणादिः, करणस्य काष्ठदेज्वलनादिः, अधिकरणस्य, सम्भवनधारणादिः, कर्मणो निर्वृत्यादिः, कर्तुः प्रसद्धि एव प्रयोजकस्य प्रेषणादिः' (हरदत्त-प0 मं0 532)

ट. सर्वेषाञ्च कारकाणां स्वस्वानतरक्रियाद्वारा प्रधानक्रियानिष्पादकत्वं बोध्यम् (ल0 शे0 शे0 627)।

ठ. कारकाद्दत्तश्रुतयोः इत्यादौ तु कारकशब्दः स्वर्यते। तेनैतदधिकारोक्तं कर्त्रादिषट्कमेव गृह्यते (श0 कौ0 II पृ0 11)

ड. क्रियान्वयित्वं कारकत्वमिति तु न, कारकाणां भावनान्वय इत्यस्य क्रियान्वयिनां क्रियान्वय इत्यर्थापत्त्याऽसंगत्यापत्तेः (ल0 मं0 पृ0 1196)।

ढ. कारकाणां भावनान्वय इति वाक्यं घटत्ववान् घटत्ववान इतिवत्स्यादिति बोध्यम् (बृ0 श0 शे0 798)

ण. कारकप्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्तः स्वस्वामिभावादिः शेषस्तत्र षष्ठी स्यात् (श0 कौ0 II 239)

त. सवाश्रये समवेतानां तद्वदेवाश्रयान्तरे/ क्रियाणामभिनिष्पत्तौ सामर्थ्य साधनं विदुः (वा0 प0 3.7.1)।

[18]अवतरण – प्रथमार्थ बताने के बाद द्वितीयार्थनिह्वपण के प्रसङ्ग में कर्म कारक को स्पष्ट करने के उद्देश्य से कर्मत्वप्रतिपादक संज्ञाशास्त्र की अवतारणा की जा रही है-

[19]द्रष्टव्य- साधनव्यवहारश्च बुद्धयवस्थानिबन्धनः। सन्नसन्वार्थह्वपेषु भेदो बुद्ध्या प्रकल्प्यते।। (वा0 पृ0 3.7.3)

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777

भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,28-32**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 18 जनवरी 2022

भारत में श्रम-कल्याण

शोभराज*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *भारत में श्रम-कल्याण* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र का लेखक मैं *शोभराज* घोषणा करता हूँ कि लेखक के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेता हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देता हूँ। मैंने शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देता हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देता हूँ।

विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने श्रम-कल्याण के विभिन्न अर्थ लगाये हैं। श्रम-कल्याण कार्यों की परिभाषा देश के आर्थिक विकास, औद्योगिक, सामाजिक व्यवस्था एवं नैतिक मूल्यों के अनुसार बदलती रहती है।

इस सम्बन्ध में शाही श्रम आयोग ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्ट किया कि, ''श्रम-कल्याण शब्द की परिभाषा लोचदार होनी चाहिए जिससे कि विभिन्न देश अपने-अपने सामाजिक रीति रिवाजों, औद्योगीकरण की स्थिति तथा श्रमिकों के शैक्षणिक स्तर के अनुरूप इसके अलग-अलग अर्थ लगा सकें।''

श्रम-कल्याण के कार्य क्षेत्र को स्पष्ट करते हुए *कृषि जाँच कमेटी* ने लिखा है कि श्रम कल्याण कार्यक्रमों के अन्तर्गत श्रमिकों के आर्थिक, सामाजिक, शारीरिक, नैतिक तथा बौद्धिक विकास के कार्यों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

श्रम-कल्याण कार्य से तात्पर्य किसी फर्म द्वारा श्रमिकों के व्यवहार और कार्य के लिए कुछ नियमों को अपनाया जाना है।(ई0टी0 कैली)

कल्याण कार्य वह कार्य है जिसके अन्तर्गत कर्मचारियों के लिए उनके वेतन के अतिरिक्त उन तमाम कार्यों को सम्मिलित कर लिया जाता है जो उनके आराम तथा मानसिक व सामाजिक उन्नति के लिए किये जाते हैं और जो न तो कानून के द्वारा अनिवार्य हैं न ही उद्योग के लिए आवश्यक है।

श्रम-कल्याण से आशय विद्यमान औद्योगिक प्रणाली तथा अपनी फैक्ट्रियों में रोजगार की दशाओं को उन्नत करने के लिए मालिकों द्वारा किये गये ऐच्छिक प्रयत्नों से है। (श्री0 ई0 एम0 ग्राउण्ड)

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि श्रम-कल्याण कार्यों के अन्तर्गत सरकार उद्योगपति तथा श्रम संघों द्वारा कारखानों के अंदर तथा बाहर प्रदान की जाने वाली उन समस्त सुविधाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका उद्देश्य श्रमिकों का शारीरिक बौद्धिक और नैतिक उत्थान करना है।

* (एम0एड्0, एम0ए0 अर्थशास्त्र, एम0ए0 समाजशास्त्र) पी0सी0पी0एम0 इण्टर कॉलेज (दरियापुर-छीछा) फतेहपुर (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

श्रम-कल्याण कार्यों के उद्देश्य

* श्रमजीवियों में नागरिकता की भावना जागृत करना, * श्रम संघ, सरकार व नियोक्ता के मध्य समन्वय स्थापित करना, * श्रमिकों को रहने और काम करने की मानवीय दशायें उत्पन्न करना, * श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि करना।

भारत में श्रम कल्याण की आवश्यकता

औद्योगिक उन्नति में उत्पादन के प्रमुख उपादान श्रम के प्रणेता श्रमिकों की कार्यक्षमता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। श्रमिकों की कार्यक्षमता को अनेक तत्व प्रभावित करते हैं, यथा -श्रमिकों के कार्य करने की दशाएँ, उपलब्ध खाद्य सामग्री, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन के साधन आदि। श्रम कल्याण कार्यों से औद्योगिक एवं आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

भारतीय परिस्थितियों के संदर्भ में श्रम कल्याण का विशेष महत्व है जिसको इस प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं - श्रम कल्याण कार्य श्रम और पूँजी के बीच निकटतम सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होते हैं। इससे औद्योगिक *वातावरण स्वस्थ एवं शान्तिप्रिय* होता है।

श्रम कल्याण कार्यक्रमों से श्रमिकों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठता है, उनका स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है तथा उनको मानसिक शांति मिलती है। इससे श्रमिकों की कार्य क्षमता तथा *श्रम की उत्पादकता में वृद्धि* होती है।

आधुनिक युग में श्रम-कल्याण कार्य औद्योगिक व्यवस्था का एक अनिवार्य अंग बन गया है। यह श्रमिकों के हृदय में आत्म-गौरव की भावना प्रेरित करता है।

श्रम कल्याण कार्यक्रमों के अन्तर्गत *श्रमिकों को शिक्षित करने* के लिए रात्रिकालीन स्कूल अथवा अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जा सकती है। इससे श्रमिकों में शिक्षा का प्रसार होगा। वे शिक्षित होकर अपने अधिकारों और दायित्वों का अच्छी तरह से निर्वाह कर सकेंगे। तकनीकी शिक्षा देकर अकुशल श्रमिकों को कुशल बनाया जा सकता है।

कल्याण कार्य की व्यवस्था श्रम एवं पूँजी की *मानसिक क्रान्ति के* द्वारा उनके हृदय परिवर्तन का एक श्रेष्ठ साधन है।

श्रम कल्याण कार्यक्रमों के अन्तर्गत आवासीय सुविधा, खेलकूद कार्यक्रम, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं आदि के विकास *से श्रमिकों की नैतिकता में वृद्धि होती है।* वह इन कार्यक्रमों में व्यस्त रहने से अनैतिक कार्यों की ओर कम ध्यान दे पाता है।

देश की आर्थिक, सामाजिक समस्याओं के समाधान के उद्देश्य से हमारी राष्ट्रीय सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं का कार्यक्रम अपनाया है। प्रत्येक योजना की सफलता कठोर श्रम पर निर्भर है। अतः श्रमिक ही हमारी योजना के आधार स्तम्भ है। श्रमिक उसी समय पूर्ण सहयोग और सद्भावना से कार्य करेंगे जब वे समझ लेंगे कि उद्योगपति और सरकार दोनों ही उनके वर्तमान और भावी जीवन को उन्नत बनाने में क्रियाशील है।

श्रम कल्याण सेवाओं एवं सामाजिक सुरक्षा में अन्तर

श्रम कल्याण और सामाजिक कल्याण में मौखिक अन्तर होता है। श्रम कल्याण कार्य जैसा कि शब्दों से प्रकट होता है श्रमिकों के ही कल्याणार्थ किए जाते हैं, परन्तु सामाजिक कल्याण कार्यों में आवश्यक नहीं कि वे केवल श्रमिकों के ही लाभार्थ किए जायें। समाजिक कल्याण कार्य सम्पूर्ण सामाजिक क्षेत्र में सम्पूर्ण समाज के हित के दृष्टिकोण से किये जाते हैं। इस प्रकार श्रमिकों का हित भी इसके अंदर आ जाता है।

अतः स्पष्ट है कि श्रम कल्याण कार्यों का सम्बन्ध सेवा- योजकों, श्रमिकों, समाजसेवी संस्थानों द्वारा श्रमिकों के नैतिक व भौतिक कल्याण के लिए किए गये कार्यों से होता है जबकि सामाजिक कार्यों का सम्बन्ध राज्य सरकार द्वारा अथवा सामाजिक

समितियों द्वारा किये गए कार्यों से होता है। स्पष्टतः सामाजिक कल्याण कार्यों का क्षेत्र, श्रम कल्याण कार्यों की अपेक्षा बहुत अधिक है।

भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही निम्न श्रम कल्याण योजनाएँ

1. चिकित्सालय एवं औषधालय।
2. कैंसर से पीड़ित बीमा/ सिनेमा/ खान श्रमिकों के इलाज की योजना।
3. बीड़ी तथा खान श्रमिकों के लिए क्षय रोग चिकित्सालयों में बिस्तरों की आरक्षण योजना।
4. कुष्ठ रोग से पीड़ित बीड़ी तथा खान श्रमिकों के इलाज की योजना।
5. खान श्रमिकों को कृत्रिम अंग उपलब्ध कराने की योजना।
6. खान श्रमिकों की घातक और गम्भीर दुर्घटना होने पर क्षतिपूर्ति के भुगतान की योजना।

आवासीय सुविधाएँ

1. अपना घर बनाओ योजना।
2. बीड़ी उद्योग में कार्यरत् आर्थिक दृष्टि से निर्बल वर्गों के लिए आवास योजना।
3. बीड़ी श्रमिकों की सहकारी समितियों के कार्यशालाओं अथवा गोदामों के निर्माण के लिए छूट तथा वित्तीय सहायता के अनुदान की स्वीकृति की योजना।
4. खान तथा बीड़ी श्रमिकों के लिए सामूहिक आवासीय योजना।
5. हमालों के लिए आवास हेतु वित्तीय सहायता।

शैक्षणिक सुविधाएँ

इसके लिए श्रमिक शिक्षा केन्द्रीय बोर्ड की स्थापना की गयी। 1970 ई0 में इस बोर्ड ने मुम्बई में इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ वर्कस एजूकेशन की स्थापना की जो उद्योग में लगे अधिकारियों एवं कर्मचारियों को अल्पकालीन शिक्षा देता है।?

इसके अतिरिक्त और कुछ योजनाएँ आईं :

1. खान, बीड़ी, सिनेमा श्रमिकों के बच्चों के लिए 5वीं कक्षा तक उच्च कक्षा में मान्यता प्राप्त संस्थाओं में अध्ययनरत छात्रों के लिए छात्रवृत्ति।
2. कक्षा 4 तक में अध्ययनरत अभ्रक खानों में कार्यरत श्रमिकों तथा बीड़ी श्रमिकों के बच्चों को विद्यालय की वर्दी, पाठ्य-पुस्तकों तथा लेखन सामग्री के लिए दी जाने वाली सहायता योजना।
3. लौह खनिज मैगनीज खनिज और क्रीम खनिज श्रम कल्याण कोष के अन्तर्गत स्थापित पुस्तकालयों के अनुरक्षण के लिए खान प्रबन्धकों को अनुदान।
4. अभ्रक में कार्यरत श्रमिकों के बच्चों के लिए विद्यालय।
5. अध्ययनरत बच्चों के लिए प्रोत्साहन योजना।

मनोरंजनात्मक सुविधाएँ

1. भ्रमण सह-अध्ययन यात्रा के लिए अनुदान योजना
2. टेलीविजन सेटों की प्रतिपूर्ति योजना
3. खेलकूदों का आयोजन
4. श्रमिकों के विद्यालय जाने वाले बच्चों के लिए बस खरीदने की योजना।

श्रम कल्याण कार्यों की असफलता के कारण

भारत में श्रम कल्याण कार्यों की धीमी प्रगति के मुख्य कारण निम्नलिखित है :

1. भारतीय मिल मालिकों अथवा सरकारों द्वारा संगठित किये गये कल्याण कार्यों में नियोजन एवं वैज्ञानिक दृष्टि- कोण का अभाव है।
2. श्रमिक वर्ग मालिकों के प्रति सहयोग की भावना नहीं रखते।
3. देश में श्रम कल्याण सम्बन्धी अधिनियम भी अनियोजित एवं अवैज्ञानिक ढंग से पास हुए हैं।
4. श्रम कल्याण कार्यक्रमों के प्रशासन के लिए संस्थान के कल्याण अधिकारों तथा इसके बाहर राज्य निरीक्षालय अपनी भूमिका अनेक कारणों से समुचित रूप से नहीं निभा सके।
5. एकता धनाभाव के कारण श्रमिक संघ अधिक कल्याण कार्य करने में असफल रहे हैं साथ ही साथ देश में यह समझा जाता है कि श्रमिक संघ केवल हड़ताल करवाने या मालिक से अधिक मजदूरी वसूल करने का एक साधन मात्र है।

सुझाव

1. कारखाना अधिनियम -1948 ई0 में उल्लिखित श्रम कल्याण सम्बन्धी धाराओं का उद्योगपतियों द्वारा पूरा- पूरा पालन किया जाना चाहिये।
2. विभिन्न अधिनियमों के अन्तर्गत श्रम-कल्याण कार्य न करने पर दण्ड की व्यवस्था बहुत ही कम है। अधिकांश मामलों में आर्थिक दण्ड की व्यवस्था है।
3. वर्तमान समय में श्रम-कल्याण कार्य विभिन्न प्रकार की संस्थाओं द्वारा किया जा रहा है। इन सभी प्रयासों को सम्बन्धित करते हुए स्वीकृत योजना के निर्माण की आवश्यकता है।
4. श्रम सम्बन्धी संस्थाओं का और अधिक विकास किया जाना चाहिए।
5. श्रमिक संघों को अपनी आय का कुछ भाग श्रम-कल्याण पर व्यय करना चाहिए। इसके लिए सरकार व उद्योग- पतियों दोनों द्वारा कुछ अनुदान प्रतिवर्ष इन संघों को दिये जाने चाहिए जिससे कि ये आर्थिक साधन जुटा सकें।
6. भारत सरकार का उद्देश्य समाजवादी समाज की स्थापना करना है। अतः सरकार को श्रम-कल्याण पर अधिक व्यय करना चाहिए। श्रमिक बस्तियाँ स्थापित की जानी चाहिए। श्रम-कल्याण केन्द्रों की संख्या बढ़ायी जानी चाहिए। श्रमिकों के लिए अलग से अस्पताल व चिकित्सलय खोले जाने चाहिए। श्रमिकों में खेलकूद को बढ़ावा देने के लिए प्रतियोगिताएँ आयोजित की जानी चाहिए।
7. श्रम-कल्याण अधिकारियों को अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक रहना चाहिए।
8. श्रम संगठनों द्वार भी अपने सदस्यों के कल्याण के लिए रचनात्मक कदम उठाने चाहिए।

श्रम कल्याण पर मानवीय समिति ने श्रमिक सुविधाओं के लिए जो सिफारिशें दी हैं उनमें से कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें निम्नलिखित हैं :

1. सरकार को सह उद्योगों के लिए न्यूनतम सुविधाएँ निश्चित कर देनी चाहिए और जो उद्योग आर्थिक दृष्टि से ये सुविधाएँ नहीं दे सकते उन्हें एक अवधि-विशेष तक छूट मिलेगी।
2. श्रमिक कोष की स्थापना होनी चाहिए। इस कोष की धनराशि से स्कूल, दवाखानों और घरों का निर्माण किया जाना चाहिए।
3. महिला श्रमिकों के बच्चों के लिए शहरों के केन्द्रीय स्थानों पर सबके सहयोग से शिशु गृह कायम किया जाना चाहिए।
4. यदि उपयुक्त सिफारिशों को कार्यान्वित किया जाएगा तो इससे न केवल श्रमिक वर्ग बहुत सुखी और सन्तुष्ट होगा, बल्कि उनका सुख व सन्तोष देश के औद्योगिक विकास और समृद्धि में भी सहायक होगा।

संदर्भ सूची

औद्योगिक विवादों का संराधन -बालेश्वर पाण्डेय, पटना -बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी
औद्योगिक संगठन -शंकर सहाय सक्सेना, प्रयाग -रामनारायण लाल

आर्थिक विकास एवं नियोजन -एस0एस0 गुप्त, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी
भारत में सामाजिक समस्यायें -तेजस्कर पाण्डेय एवं संगीता पाण्डेय, टॉटा मैक्ग्रॉ हिल पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली
भारतीय अर्थव्यवस्था -जे0पी0 मिश्र, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी
श्रम समस्यायें एवं श्रम कल्याण -डॉ0 रामचन्द्र पाठक, विजय प्रकाशन मन्दिर, वाराणसी

पत्रावली संख्या V-34564,पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777
भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2022) **16,33-36**
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 21 जनवरी 2022

महामना मालवीय का विराट व्यक्तित्व और मानव धर्म

डॉ० शबनम खातून*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *महामना मालवीय का विराट व्यक्तित्व और मानव धर्म* शीर्षक लेख/ शोध प्रपत्र की लेखिका मैं *शबनम खातून* घोषणा करती हूँ कि लेखिका के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेती हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख/ शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देती हूँ। यह लेख/ शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इस छपने के लिये भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध प्रपत्र आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देती हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देती हूँ।

''मधुर मनोहर अतीव सुंदर यह सर्व विद्या की राजधानी/ यह मालवीय जी की देश भक्ति/ यह उनका साहस यह उनकी शक्ति''

मालवीय जी ने काशी को हृदय से लगाया और विद्या की राजधानी काशी को अपने साहस और शक्ति से इतना विशाल और विराट शिक्षा का मंदिर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रूप में दिया।

महामना मदन मोहन मालवीय जी का जन्म 25 दिसंबर 1861 में संगम नगरी इलाहाबाद में हुआ। लेकिन नियति ने इनके लिए कुछ और ही सोच रखा था। मां गंगा उनको अपने पास काशी में रखना चाहती थीं। यही वजह है कि महामना ने अपनी कर्मस्थली काशी को बनाया।

महामना एक युग पुरूष और दूरदर्शी इंसान थे। एक ऐसे इंसान जिन्होंने सदैव मानव धर्म की सेवा की, अपने धर्म पर अटूट विश्वास होने के साथ-साथ दूसरे धर्म को भी उतना ही सम्मान दिया जितना अपने धर्म को। उन्होंने धर्म और सम्प्रदाय से ऊपर उठकर मानवता की सेवा की, यही वजह है कि उन्होंने विधानसभा में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय विधेयक प्रस्तुत करते हुए अपने भाषण में कहा था, ''इस विश्वविद्यालय में संकुचित साम्प्रदायिका को आश्रय नहीं दिया जाएगा वरन उस व्यापक उदारता और धार्मिक भावना को प्रोत्साहित किया जाएगा जो मनुष्य और मनुष्य के बीच भ्रातृत्व की भावना का विकास कर सके।''

आज मालवीय जी ही की देन है कि इतना सुंदर विद्या का मंदिर सौ वर्षों से अधिक मानव को मानवता का पाठ पढ़ा रहा है, जहां पढ़ने वालों में देश प्रेम और भ्रातृत्व की भावना का विकास होता है क्योंकि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना का आधार धर्म, संस्कृति और विज्ञान है।

आज हर तरफ साम्प्रदायिकता की आग जलती हुई नजर आ रही है। देश के कुछ अराजक तत्व इस आग को निरन्तर भड़काने में लगे हुए हैं। जबकि मालवीय जी का यह विचार था -''भारत वर्ष केवल हिन्दुओं का देश नहीं है यह तो मुस्लिम

* ऊर्दू शिक्षक, सी0एच0जी0एस0 कॉलेज, गुरूबाग (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) वाराणसी (उत्तर प्रदेश) भारत

© लेखक 2022, एम0पी0ए0एस0वी0ओ0 मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहासंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

ईसाई और पारसियों का भी देश है यह तभी समुन्नत और शक्तिशाली हो सकता है जब भारतवर्ष की विभिन्न जातियाँ और यहाँ के विभिन्न सम्प्रदाय के लोग पारस्परिक सद्भावना और एकात्मकता के साथ रहें। जो भी लोग इस एकता को भंग करने का प्रयास करते हैं वह केवल अपने देश के ही नहीं अपनी जाति के भी शत्रु हैं।

महात्मा गांधी जी यह अच्छी तरह जानते थे कि पण्डित मदन मोहन मालवीय जी किस सोच के व्यक्ति हैं इसलिए उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अपने भाषण में कहा था, 'स्वतंत्रता के समय पण्डित मदन मोहन मालवीय रहते तो भारत का विभाजन न होता।'

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की नींव जिस सोच के साथ रखी गई थी महात्मा गाँधी उससे अच्छी तरह से वाकिफ थे। यही वजह है कि विश्वविद्यालय उनके लिए तीर्थ था। वह कहते थे कि इस विश्वविद्यालय में आना हमारे लिए तीर्थ के समान है।

उन्होंने उस विश्वविद्यालय की परिकल्पना को पूरा करने के लिए बारह वर्षों तक भीख मांगी जहां इंसान पैदा हो सके, जहां मानवता के पुजारी पैदा हो सकें, जिनके हाथों भारत की ऐतिहासिक तकदीर लिखी जाए और यहां से निकलने वाला हर बच्चा सुदृढ़ और स्वस्थ समाज और राष्ट्र का निर्माण कर सके। इसके लिए महामना को 'किंग ऑफ बेगर्स' (भिखारियों के राजा) की उपाधि भी दी गई लेकिन आप अपने इस मिशन से तनिक भी नहीं हिले।

शिक्षा के विराट मंदिर के लिए, देश के बच्चों के सुशिक्षित भविष्य के लिए इस तरह भिक्षा मांगी जैसे कोई भिखारी मांगे। लोग आने दो आने भी आपके भिक्षा पात्र में डाल देते उसको भी खुशी से स्वीकारते। विश्वविद्यालय को जब अधिक धन की आवश्यकता पड़ी तो आप निज़ाम हैदराबाद उस्मान मीर अली के पास दान लेने के लिए पहुँच गए। वहां पहुंचकर निज़ाम से मिलने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन निज़ाम से मिलना नहीं हो पा रहा था। मालवीय जी को पता चला कि निज़ाम उस्मान मीर आली गुरूवार के दिन भिखारियों को भिक्षा देते हैं। मालवीय जी भी वहाँ पहुँच गये देखा कि भिखारी लोग लाइन लगाए बैठे हुए हैं। मालवीय जी भी उन्हीं भिखारियों की पंक्ति में जाकर बैठ गए। नवाब मीर उस्मान अली सभी भिखारियों को भिक्षा देते हुए जब मालवीय जी तक पहुँचे तो मालवीय जी को देखते ही कहा कि आप कोई भिखारी तो नहीं मालूम होते हैं? मालवीय जी ने कहा कि मैं शिक्षा के लिए भिक्षा मांगने आया हूँ। एक हफ्ते से आपसे मिलने के लिए इस शहर में हूँ लेकिन आप से मिलने की कोई सूरत नज़र नहीं आ रही थी तो मैं आपसे मिलने यहां आकर बैठ गया.....मालवीय जी की पूरी बात सुनकर नवाब मीर उस्मान अली ने उनको गले लगाया और उनको अपने साथ ले आए, उनका बहुत स्वागत सत्कार किया और महामना को दान स्वरूप बहुत सारा धन दिया।

मालवीय जी ने अपने सपने को साकार करने के लिए भिखारियों के साथ भी बैठे, लोगों की भली बुरी बातें भी सुनी लेकिन अपना संकल्प विश्वविद्यालय के रूप में पूरा किया।

महामना यूँ ही महामना नहीं हुए उनका विज़न उनकी दूरदृष्टि दूसरों से बिल्कुल अलग थी। वह सही मायनों में युगपुरूष और राष्ट्र निर्माता थे। एक अच्छे राष्ट्र के लिए छात्रों को किस तरह से तैयार करना है, उनको मालवीय जी अच्छी तरह जानते थे। जिस समय सभी भारतवासी स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े थे उस समय भी महामना आने वाले कल के लिए राष्ट्र निर्माण के लिए छात्रों को स्वतंत्रता आन्दोलन का हिस्सा बनने से रोक रहे थे। जिस गांधी जी असहयोग आन्दोलन के लिए देशवासियों का आवाहन कर रहे थे, वह इसके लिए बनारस आए और सेंट्रल हिन्दू कॉलेज जो अब सी0एच0एस0 के नाम से जाना जाता है, वहां के प्रांगण में अपना ऐतिहासिक भाषण दिया और यहां के छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि आप अपना 2 वर्ष मुझे दे दें तो देश स्वतंत्र होने में समय नहीं लगेगा। सभी छात्र पढ़ाई छोड़ कर असहयोग आन्दोलन का हिस्सा बनने के लिए तैयार हो गए।

जब गांधी जी छात्रों को सम्बोधित करके मंच पर बैठे तो उसी मंच पर बैठे हुए मालवीय जी उठे और छात्रों को सम्बोधित करते हुए महात्मा गांधी से कहा कि यहां का एक भी छात्र असहयोग आन्दोलन का हिस्सा नहीं बनेगा। आप आजादी दिलाइए, फिर यहां के पढ़े छात्र राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान देंगे और देश का नेतृत्व करेंगे और छात्रों से कहा कि आपको सिर्फ पढ़ाई कर ध्यान देना है आजादी हम ले लेंगे।

मालवीय जी जानते थे कि देश तो आजाद हो जाएगा, लेकिन देश के भविष्य यह बच्चे बिगड़ गए और पढ़ाई लिखाई से दूर हो गए तो देश का भविष्य बिगड़ जाएगा।

गांधी जी और मालवीय जी दोनों एक दूसरे का बहुत सम्मान करते थे। दोनों को एक दूसरे से बहुत स्नेह था लेकिन जब छात्रों के भविष्य का मामला आता है तो मालवीय जी बिल्कुल उठ खड़े होते हैं।

मालवीय जी स्वयं भी अनुशासित थे और विश्वविद्यालय के छात्रों को भी अनुशासन में देखना चाहते थे। वह चाहते थे कि एक स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण हो इसके लिए वह छात्रों से कहते, ''दूध पियो कसरत करो और जपो हरि नाम''

महामना प्रकृति प्रेमी थे वह चाहते थे कि बच्चों की शिक्षा भी प्रकृति के बीच में हो। जब यह छात्र प्रकृति की गोद में हरे भरे वृक्षों के साए में शिक्षा हासिल करेंगे तो वह अत्यन्त सरल होगे, सहृदय होंगे और उनके विचार शुद्ध एवं उच्च कोटि के होंगे। यही बजह है कि पूरा विश्वविद्यालय सैंकड़ों तरह के हजारों वृक्षों से भरा पड़ा है।

मालवीय जी को वृक्षों से इतना आगाध प्रेम था कि किसी भी हाल में उसको काटने देना नहीं चाहते। यहाँ पर एक वाकए का जिक्र करना मैं जरूरी समझती हूं कि एक बार विश्वविद्यालय में निर्माण कार्य चल रहा था। दीवार उठाई जा रही थी उसी के बीच में एक पेड़ आ रहा था मालवीय जी से कहा गया कि इस पेड़ को काट देते हैं वरना दीवार टेढ़ी हो जायेगी मालवीय जी ने कहा कि दीवार टेढ़ी हो जाने दीजिए लेकिन वृक्ष को मत काटिए।

मालवीय भवन में अमरूद के पेड़ की ऐसी वेरायटी थी जो कहीं देखने को नहीं मिलती थी। विश्वविद्यालय में सभी पेड़ बड़े ही व्यवस्थित तरीके से लगाए गए हैं। आज भी बी0एच0यू0 के हर लेन इन नामों से जाने जाते हैं जैसे इमलिया लेन, महुआ लेन, जमुनिया लेन, आम लेन, शीशम लेन, सागौन लेन आदि।

महामना समाज के उस आधी आबादी को भी शिक्षित करना चाहते थे जिन जिनको शिक्षित किए बिना एक सुंदर समाज की हम कल्पना नहीं कर सकते। उन्होंने स्त्री शिक्षा के लिए विश्वविद्यालय में महिला महाविद्यालय की स्थापना की। जबकि उस समय महामना के इस पहल का हर सम्प्रदाय के लोग विरोध कर रहे थे। लेकिन महामना ने कहा कि जो भी लड़कियाँ पढ़ना चाहेंगी उनको हम शिक्षा जरूर देंगे। महमना यह चाहते थे कि स्त्रियों के लिए भी वह सब कुछ किया जाए जो पुरूषों के लिए किया जाता है, इसलिए उन्होंने स्त्रियों को संगीत सिखाने और वेद पढ़ाने की परम्परा भी शुरू की। मालवीय जी स्त्री शिक्षा को देश और समाज के लिए जरूरी समझते थे और वह कहते थे, ''पुरूषों की तरह, स्त्रियों को भी देश हित का कार्य करना चाहिए उन्हें याद रखना चाहिए कि ईश्वर का तत्व उनमें भी है और जब तक इस मार्ग में अग्रसर नहीं होंगी तब तक देश की उन्नति नहीं होगी।

मालवीय जी शिक्षक को समाज का 'सर्वश्रेष्ठ सेवक' कहते थे उनका कहना था कि अगर अध्यापक देशभक्त है, राष्ट्रीयता से ओतप्रोत है, शिक्षा और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझता है तो ऐसा शिक्षक जरूर देशभक्त और समाज के प्रति जिम्मोदार नागरिक उत्पन्न कर सकता है। उनका कहना था कि विद्यार्थियों को इतना योग बनायें, उनमें इतनी क्षमता पैदा कर दें ताकि दूसरे देशों से प्रतिस्पर्धा करके अपने राष्ट्र को शक्तिशाली बना सकें।

मालवीय जी का जीवन संगीत के स्वर लहरियों से भी भरा हुआ था। जीवन संघर्षों का नाम है, जीवन चुनौतियों का नाम है, इन संघर्षों और चुनौतियों से जूझते-जूझते कभी कभी जीवन भारी लगने लगता है ऐसे में संगीत जीवन में उत्साह भर देता है और जब सुख दुख के साथ संगीत की तरंग मिल जाती है तो जीवन आनन्दमय हो जाता है। मालवीय जी के सादगी भरे जीवन में संगीत की तरंग भी थी। आपको संगीत का शौक भी था और ज्ञान भी था।

एक बार रात के आठ नौ बजे के करीब मालवीय जी के बहुत ही परिचित गायक आए। वह अक्सर मालवीय जी के पास आते थे। मालवीय जी ने उनसे राग मालकौंस में कुछ गाने को कहा, उन्होंने तुलसीदास जी का एक भजन सुनाया और कुछ बंदिशें सुनाई जो भीमपलासी, केदार और राग बिहाग में थी। बंदिशें सुनने के बाद मालवीय जी ने राग सोहनी में कुछ गाने को कहा। गायक महोदय ने राग सोहनी में गाने की कोशिश तो की लेकिन गले में पिछले गाए हुए रागों का असर अभी चढ़ा हुआ था, चूंकि मालवीय जी संगीत के अच्छे ज्ञाता थे वह समझ गए कि यह प्रयास तो कर रहे हैं लेकिन

पूरी तरह ट्रैक बदल नहीं पा रहे हैं तो मालवीय जी उठे और स्वयं राग सोहनी में बंदिश गाने लगे, ''नींद तोहे बेचूँगी, जो कोई गाहक होय/ आए रे ललना, फिरि गए अंगना,/ आए रे ललना, फिरि गए अंगना,/ मैं पापिन रही सोए/ जो कोउ गाहक होय।''

विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षकों की नियुक्ति में भी मालवीय जी बहुत रूचि लेते और साक्षात्कार के समय में उम्मीदवारों से ऐसे सवाल करते कि जैसे कोई संगीत मर्मज्ञ परीक्षा लें। एक साक्षात्कार में मालवीय जी ने उम्मीदवार से संध्या समय का राग सुनाने को कहा कुछ देर सुनने के बाद फिर उससे दरबारी राग की फरमाइश की। उम्मीदवार को भी अंदाजा लगाना मुश्किल हो जाता है कि आखिर मालवीय जी क्या हैं वकील हैं शिक्षक हैं कवि हैं धार्मिक गुरू हैं राष्ट्र नेता हैं सुधारक हैं विचारक हैं या संगीतज्ञ हैं। संगीत के प्रति रूझान प्राइमरी पाठशाला के शिक्षक पण्डित हरिदेव जी की वजह से हुआ। मल्हार राग के प्रति मालवीय जी को बहुत लगाव था। बीमारी की हालत में अगर कोई संगीत का व्यक्ति आपसे मिलने आता तो उससे मल्हार गीत सुनने की इच्छा प्रकट करते। कहा जाता है कि अगर मालवीय जी के सामने देश की स्वतंत्रता और शिक्षा का विराट स्वरूप न होता तो वह संगीत की दुनिया का एक चमकता सितारा होते।

मेरा मानना है कि संगीत ही नहीं बल्कि जिस भी क्षेत्र में आप जाते उसमें उनका कोई सानी न होता और जिस क्षेत्र में गए उसमें भी उनकी कोई मिसाल नहीं है।

महामना का व्यक्तित्व उस विराट आकाश की तरह है जिसमें साए में मनुष्यता पलती है।

संदर्भ

भारतीय शिक्षा के अग्रदूत : महामना मालवीय एवं आचार्य नरेन्द्र देव (2019) -इंजि प्रेमलाल सिंह, अमित पब्लिकेशन हाउस
महान शिक्षाशास्त्री पण्डित मदन मोहन मालवीय -अवधेश कुमार चौबे, हारपरकोलिंस प्रकाशन
भारत रत्न पण्डित मदन मोहन मालवीय (2016) -डॉ0 सुरेश शर्मा, राज पब्लिकेशन
महमना पं0 मदन मोहन मालवीय (2018) -मंजूमन, प्रभात प्रकाशन
मदन मोहन मालवीय (2010) -धनंजय चोपड़ा, प्रभात प्रकाशन

लेखकों के लिए निर्देश

शोधपत्र का अनुरोध

लेखक अपना शोधपत्र डॉ० मनीषा शुक्ला, प्रधान सम्पादिका आन्वीक्षिकी भारतीय शोध पत्रिका को ई-मेल पर प्रेषित करें। (maneeshashukla76@rediffmail.com)

प्राप्त शोधपत्र पत्रिका में प्रकाशन के पूर्व पुनर्निरीक्षित किये जायेंगे। स्वीकृत शोधपत्र कहीं और प्रकाशित नहीं होना चाहिए और न ही उस शोधपत्र का कोई भी भाग प्रधान सम्पादिका के अनुमति के बिना कहीं और प्रकाशित किया जा सकता है। कृपया अपने शोधपत्र की पाण्डुलिपि निम्न भागों में तैयार करें - शीर्षक, सारांश, पाण्डुलिपि, पुस्तक संदर्भ सूची। कृपया पुनर्निरीक्षण की गुणवत्ता में सहायता करने हेतु अपना नाम पता पाण्डुलिपि पर न दें।

शीर्षक : शीर्षक पाण्डुलिपि पर अवश्य दें, किन्तु अपना पूरा नाम, पता, संस्था जहाँ पर अध्ययन अथवा अध्यापन कार्य सम्पादित किया गया हो, आपका विषय, दूरभाष अथवा मोबाइल, फैक्स, ई-मेल पत्राचार हेतु अलग पृष्ठ पर अवश्य दें। उपर्युक्त तथ्य आपके शोधपत्र के शब्द सीमा के अन्तर्गत ही माना जायेगा।

सारांश : कृपया शोधपत्र का सारांश 120 शब्दों में दें।

पाण्डुलिपि : इसके अन्तर्गत मुख्य पाठ्य सामग्री होगी, जो ५ से १० पृष्ठ तक होनी चाहिए। शोधपत्र १० पृष्ठ से (सारांश, शब्द संक्षेप, संदर्भ सूची समेत) अधिक प्रकाशन हेतु स्वीकार नहीं किया जायेगा। अन्यथा वृहद् शोधपत्र (१० पृष्ठ से अधिक) प्रकाशन में देर भी हो सकती है। लेखक को यह बात स्वीकार होनी चाहिए कि शोधपत्र पुनर्निरीक्षण के दौरान किये गये संशोधन उन्हें मान्य होंगे। शोधपत्र प्रकाशन के दौरान त्रुटि की सम्भावना न बने इसका पूरा ध्यान रखा जाता है फिर भी कोई त्रुटि पाये जाने पर लेखक संशोधित रीप्रिंट प्राप्त कर सकता है, पत्रिका में संशोधन की व्यवस्था नहीं है।

सन्दर्भ वर्णमालाक्रमांक : शोधपत्र के समापन पर कृपया संदर्भ वर्णमाला क्रमानुसार दें। पत्रिका का वर्ष, लेखक, पृष्ठ संख्या, भाग इत्यादि विस्तार से दें। पुस्तक शीर्षक या पत्रिका शीर्षक इटालिक दें।

पुस्तक : प्रकाशक का नाम, संस्करण संख्या, प्रकाशन वर्ष, लेखक का नाम, पुस्तक का नाम, पृष्ठ संख्या

पत्रिका : पत्रिका का नाम, लेख का शीर्षक, लेखक का नाम, प्रकाशक का नाम, अंक संख्या/ माह, वार्षिक अथवा अर्द्धवार्षिक अथवा मासिक जो भी हो स्पष्ट करें।

समाचार पत्र : प्रकाशक, तिथि, सन्, पृष्ठ संख्या।

इण्टरनेट : वेबसाइट, पृष्ठ संख्या, मुख्य शीर्षक, अन्तः शीर्षक।

मानचित्र एवं सारणी : मानचित्र एवं सारणी अथवा चित्र शोधपत्र की समाप्ति के अन्त में दें। यह ब्लैक एण्ड व्हाइट ही होना चाहिए। इसका स्पष्ट संकेत पाण्डुलिपि में दें (उदाहरण सारणी संख्या १)

विशेष : कृपया अपना शोधपत्र ई-मेल करने के बाद डॉक से अवश्य भेजें। अपने शोधपत्र के साथ-साथ अपना बायोडाटा, फोटो, स्वपता लिखा लिफाफा (100 रू० के टिकट सहित) भेजें। शोधपत्र यदि हिन्दी भाषा में है तो ए०पी०एस० प्रियंका रोमन (एपीएस डिजाइनर 4.0) में तैयार सी०डी० के साथ दें। शोधपत्र प्राप्त होने के एक सप्ताह के अन्दर लेखक की स्वीकृति पत्र प्रेषित कर दिया जायेगा। ई-मेल से प्राप्त शोधपत्र हेतु ई-मेल से स्वीकृति भेजी जायेगी। शोधपत्र प्रेषित करने के पूर्व प्रधान सम्पादिक से दूरभाष पर अवश्य सम्पर्क करें। सम्पादक मण्डल अथवा सलाहकार समिति में सम्मिलित करने का अन्तिम निर्णय संस्था का होगा।

सदस्यों से निवेदन है कि वर्ष में 20 सदस्य पत्रिका से जोड़कर संस्था का सहयोग करें।

प्रकाशन
अन्य एम.पी.ए.एस.वी.ओ. पत्रिकाएँ
सार्क अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका
www.anvikshikijournal.com

अन्य सहसंयोजन
एशियन जर्नल ऑफ माडर्न एण्ड आयुर्वेदिक मेडिकल साइंस
अर्द्धवार्षिक पत्रिका
www.ajmams.com

www.anvikshikijournal.com